चतुर्थ अध्याय

"हिन्दी उपन्यासों में चित्रित दलित-जीवन की समस्याएं"

(खारेजल का गांव, धरती धन न अपना, मोरी की ईंट, एकलव्य, आग-पानी आकाश के संदर्भ में)

चतुर्थ अध्याय

''हिंदी उपन्यासों में चित्रित दलित-जीवन की समस्याएं''

(खारे जल का गांव, धरती धन न अपना, मोरी की ईंट, एकलव्य, आग-पानी आकाश के संदर्भ में)

1. प्रस्तावना।

2. अंधविश्वास की समस्या।

   अ) अंधविश्वास।

   ब) भूत-प्रेत, चुडैल-डायन की समस्या।

   क) मंत्र-तंत्र, झाड-फूंक, जड़ी-बूटी, जादू-टोना सम्बन्धी अंधविश्वास की समस्या।

   ड) शुभ-अशुभ संबंधी अंधविश्वास की समस्या।

   इ) पाप-पुण्य संबंधी समस्या।

2) शोषण की समस्या।

   अ) जमींदारों द्वारा शोषण की समस्या।

   ब) धार्मिक व्यक्ति द्वारा शोषण की समस्या।

   क) सरकारी अफसर और पुलिस द्वारा शोषण की समस्या।

   ड) राजनीतिक नेताओं द्वारा शोषण की समस्या।

   इ) नारी शोषण की समस्या।

3) जातीय भेदाभेद की समस्या।

4) भ्रष्टाचार की समस्या ।

5) अशिक्षा की समस्या।

6) अवैध यौन संबंधों की समस्या।

7) धर्म परिवर्तन की समस्या।

8) नशापान की समस्या।

9) निष्कर्ष

चतुर्थ अध्याय

"हिंदी उपन्यासों में चित्रित दलित-जीवन की समस्याएं"

(खारे जल का गांव, धरती धन न अपना, मोरी की ईंट, एकलव्य, आग-पानी आकाश के संदर्भ में)

प्रस्तावना :- मानव ने अपनी विभिन्न जैविक तथा मानसिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये सामाजिक व्यवस्था का निर्माण किया। मनुष्य से निर्मित इस सामाजिक व्यवस्था में प्रत्येक मनुष्य एक दूसरे पर अवलंबित है। इसी कारण समस्त मानव अपना जीवन समूहों में रहकर बिताता हैं। विभिन्न सामाजिक समूहों में रहकर ही मानव के गुण-दोषों का स्पष्टीकरण, विकास और परिष्कार होता हैं। इसी से ही समाज और संस्कृति की प्रगति भी होती हैं। प्रत्येक मनुष्य पर ऐसे सामाजिक समूहों का प्रभाव दिखाई देता है। हर एक व्यक्ति की रहन-सहन, विचार-भाव आदि पर प्रभाव रहता है। इसी कारण फ्रांसिस ई.मेरिल ने मानव को एक 'सामाजिक प्राणी' (ग्रुप एनीमल) कहना उचित समझा है।1 भारतीय समाज व्यवस्था में मनुष्य के जन्म से लेकर अंत तक अनेक संस्कार किये जाते हैं। बच्चा जन्म लेते ही उसका नामकरण, विवाह से लेकर मृत्यु के उपरान्त भी उस पर विधि पूर्वक संस्कार होते हैं। इसी कारण भारतीय संस्कृति को आज सारे विश्व में उच्च संस्कृति के रूप में माना गया है। वस्तुत: समाज का निर्माण मनुष्य से ही हुआ है। धीरे-धीरे समाज में कुछ ऐसे नियम तैयार किये गये जिससे मानव सही दिशा में अपना जीवन यापन करे, लेकिन अज्ञानी, अनपढ़ जनों ने सामाजिक पहलुओं को अधिकतर महत्व दिया। परिणामत: समाज, संस्कृति के विश्वास के बदले अंधविश्वास का निर्माण हुआ। यही अंधविश्वास समाज में आज तक दिखाई देते हैं।

नागरी जनजीवन की अपेक्षा ग्रामीण जनजीवन में ऐसे अंधविश्वास का पालन किया जाता है। ग्रामीण लोग अनपढ़ होने के कारण कुछ मुठ्ठी भर लोगों ने अपने स्वार्थ के लिए उनका शोषण किया, जिनमें जमींदार, धार्मिक व्यक्ति हैं। लोग रूढ़ि-परंपरा की जंजीर में अटक गये। रीति-रिवाज का वे जी-जान से पालन करने लगे। इसीकारण उनकी आर्थिक स्थिति कमजोर होती गई। व्यवसाय के आधार पर वर्णव्यवस्था निश्चित की गई। परिणामत: छुआछूत की समस्या बढ़ गई। समाज में निरंतर पीसा जाने वाला वर्ग अछूत समझा गया। अत: उन्हें धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक अधिकारों से वंचित रखा गया। जातीयता की निर्मिती हो गई। धीरे-धीरे इसी जातीयता ने भयावह रूप धारण कर लिया। ग्रामीण जन-जीवन में जातीयता की पकड़ इतनी मजबूत हो गई कि लोग एक दूसरे को जाति से पहचानने लगे। इसी तरह ग्रामीण जनजीवन में बहुमुखी समस्याओं का निर्माण हुआ। इन समस्याओं को प्रकाश में लाने का, युवकों में चेतना जागृति का प्रयास, साहित्यकारों ने किया।

सामाजिक जीवन के विकास के फलस्वरूप सामाजिक समस्याओं का निर्माण होता है। जब विकास की धारा प्रवाहित होती है तब उसमें रूकावट के रूप में कई शक्तियाँ कार्यरत रहती है, जो समस्याओं का रूप लेती हैं। मानवी जीवन का विकास भी इसके लिये अपवाद नहीं रहता। मानवी विकास में बाधा बनकर आनेवाली समस्याओं को सुलझाने का कार्य मानव करता है। सामाजिक जीवन में गरीबी, भुखमरी, विषाद, उत्पीड़न, अनमेल विवाह, उपेक्षा, अत्याचार, अमानवीयता, विधवा विवाह तथा अन्यान्य समस्याएं और विसंगतियाँ विद्यमान हैं।[2]

साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं के द्वारा समाज जीवन का चित्रण करने के साथ-साथ सामाजिक समस्याओं पर भी प्रकाश डाला है। सामाजिक समस्या का प्रभाव समाज पर होता है। समाज से जुड़ी तथा समाज को प्रभावित करने वाली समस्या को 'सामाजिक समस्या' कहा जाता है। विभिन्न समाज शास्त्रियों ने सामाजिक समस्या की अवधारणा स्पष्ट करते हुए अपना दृष्टिकोण इस प्रकार स्पष्ट किया है - "फूलर और मेयर्स ने 'सामाजिक समस्या को सामाजिक मानदंड माना', रेनहार्ट ने समाज का एक खंड या बड़ा भाग जिससे प्रभावित होता है। उसे सामाजिक समस्या माना है। राँब ने मानव संबंधों को संकट में डालने वाली स्थिति को सामाजिक समस्या माना।"[3] डॉ.शशिभूषण सिंहल कहते हैं - "सामाजिक उपन्यास समाज के विभिन्न क्षेत्रों, स्त्री-पुरूष के संबंधों, परिवार, जाति-सम्प्रदाय, वर्ग, राष्ट्र, अर्थदशा, रीति-धर्म, सभ्यता, संस्कृति आदि का चित्रण करते हुए उनके लक्ष्य तक उनकी समस्याओं का निरूपण करता हैं।"[4] यह कथन यहाँ यथार्थ लगता है। हिन्दी उपन्यासकारों ने इस दृष्टि से अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। साहित्यकारों के कार्य के बारे में डॉ.सुनंदा पालकर का विचार महत्वपूर्ण लगता है। वह मानती हैं - "जीवन की विविध समस्याओं का उद्घाटन और उसका हल यद्यपि हर समय अपेक्षित नहीं होता, फिर भी आज के उपन्यासकार का प्रधान काम है जीवन की जटिलताओं का चित्रण और विश्लेषण।"[5] आलोच्य उपन्यासकारों ने भी इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किया है। दलित जीवन की बहुमुखी समस्याओं को उजागर करके उनके प्रति संवेदना जगाने का कार्य किया है। डॉ. घुर्ये के मतानुसार - "जनजातीय समस्याएं कुछ ऐसी हैं जो इन्हीं तक सीमित हैं जैसे - नई आदतें, भाषा अथवा स्थान परिवर्तित, कृषि दूसरी समस्या है। हमारे विचार से जनजातियों की समस्याएं एक प्रकार की नहीं बल्कि अनेक प्रकार की हैं।"[6] यहाँ स्पष्ट है दलितों का जीवन समस्याओं के कटघरे में खड़ा है। उनका जीवन समस्याओं की गाथा बना है।

मानव जीवन विकसित हो रहा है। विकास और समस्या का परस्पर संबंध रहा है। भारत सरकार समाज के विकास के लिए कार्य कर रही है। पर समस्याएं बढ़ रही हैं। कई समस्याएं चुनौती होती हैं बिना समस्या से विकास सम्भव नहीं। संघर्ष मानव जीवन का मूल है। साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं में मानवी

जीवन में स्थित समस्याओं पर प्रकाश डाला है। प्रस्तुत अध्याय में दलित जीवन की समस्याएं, उनका स्वरूप, उनकी स्थिति, और परिणाम आदि के साथ-साथ आलोच्य उपन्यासों में उसका किस प्रकार चित्रण हुआ है। इस पर हम यहाँ सोचेंगे।

2) अंधविश्वास की समस्या :-

अ) अंधविश्वास :- भारतीय समाज व्यवस्था को संचालित करने वाले तत्वों के अंतर्गत धर्म का स्थान महत्वपूर्ण रहा है। भारतीय जनता का यह विश्वास है कि प्रत्येक सुख-दु:ख का निर्माता ही परमेश्वर होता है। दर्शन शास्त्र में इसे 'ईश्वरवाद' कहा है, मगर विज्ञान इसे 'अंधविश्वास' मानता है। अंधविश्वास, अशिक्षा, अज्ञान का परिणाम है। गांव अभी भी शहरों की तुलना में शिक्षा के स्तर और प्रतिशत में बहुत पीछे है। इसी कारण गांव का अधिकांश जन-जीवन अभी तक अज्ञान, अशिक्षा के साथ अंधविश्वास से जुड़ा हुआ है। अंधविश्वास के बारे में विवेकीराय का कथन है - ''गांवों को अंधविश्वासों से काटकर यदि पृथक कर दिया जाए तो वह गांव नहीं रह जाता है। गांव का अर्थ है विश्वास और शताब्दियों का यह विश्वास अंधकाराविष्ट रहा है। अत: 'अंधविश्वास' होकर उसके साथ इस प्रकार जुड़ गया है कि अनिवार्य अंग हो गया है।''[7] गांव में स्थित जनजातियाँ अज्ञानी, भोली-भाली धार्मिक प्रवृत्ति की होने के कारण समाज मान्य परम्परागत नीति का, धार्मिक मान्यताओं का और सांस्कृतिक परम्पराओं का निर्वाह करती आ रही हैं। पंडित जवाहरलाल नेहरू जी ने अंधविश्वास की भावना को समस्या का मूल कारण मानते हुए कहा है कि - ''भारत की अधिकांश सामाजिक समस्याएं जैसे जाति-पांति, दहेज-प्रथा, सांप्रदायिकता, बालविवाह आदि के पीछे मूल कारण अंशविश्वास एवं रूढ़ियों का आँखे मूंदकर पालन करना ही है।''[8]

भारतीय समाज जीवन में अंधविश्वास और मान्यता का काफी प्रभाव है। भारतीय व्यक्ति धार्मिक होने के साथ-साथ भावुक भी है। धार्मिक डर, पाप-पुण्य का भय, उसे सदा प्रभावित करता आ रहा है। उसकी धार्मिक और सांस्कृतिक धरोहर श्रद्धा पर टिकी है। श्रद्धा का दूसरा रूप विश्वास है, परंतु जिस विश्वास में विज्ञान का अभाव है उसे 'अंधविश्वास' कहा जाता है। भारतीय व्यक्ति अंधविश्वासी रहा है। इसी कारण भारतीय समाजव्यवस्था में अनेक सी अंधश्रद्धाएं अपना बेड़ा स्थिर कर चुकी हैं। भारतीय लोक जी-जान से उसका पालन भी करते है। ''मानव जीवन और जगत में होने वाली घटनाओं का संबंध कल्पना की मदत से अतिलौकिक, अतिनैसर्गिक शक्ति के साथ जोड़कर इनके प्रति विश्वास-श्रद्धा की भावना रखता है। पूजा-पाठ, यज्ञ आदि का जाल बना देता है, उसे धर्म संस्था माना हैं।''[9] इसी कारण अंधविश्वास बढ़ता है।

भारतीय जनजीवन और दलितों में बीमारी हटाने के लिए, मनोकामना पूर्ति के लिए, संकट से मुक्ति पाने के लिए, बरसात के लिए, आदि के प्रति कई अंधविश्वास देखने को मिलते हैं। हिन्दी के उपन्यासकारों

ने दलितों में स्थित धर्मसंबंधी मान्यता, अंधविश्वास, भूत, प्रेत, डायन, चुडैल संबंधी विश्वास, पाप-पुण्य संबंधी मान्यता, शकुन-अपशकुन संबंधी धारणा, मंत्र-तंत्र, जादू-टोना, झाड़-फूँक सम्बन्धी कल्पनाओं पर विस्तार से सोचा है, जिस पर यहाँ हम विचार करेंगे-

'खारे जल का गांव' उपन्यास में डॉ.भगवतीप्रसाद शुक्ल जी ने भी इस पर सोचा है। विंध्याचल अंचल के गांवों में शुभ कार्यों के समय यदि घी की मटकी गिर जाती है तब उसे अपशकुन माना जाता है। ऐसे ही जब चसिया की शादी के समय उसकी मौसी के हाथों से घी की मटकी गिर जाती है तब दोपहर होते-होते टिहकी गांव से चिंतामन तिवारी का संदेश आ जाता है। उसने कहा - "ई शादी न होई।"[10] यहाँ अंधविश्वास के दर्शन होते हैं। उपन्यासकार ने बरसात नहीं होने पर गांव के लोगों द्वारा वरूण राजा को प्रसन्न करने के लिए कई प्रचलित अंधविश्वासों का पालन करते दिखाई देते हैं जैसे - मंदिर में भजन-कीर्तन का आयोजन करना, शंकर की मूर्ति को पानी में डुबोना, देवी के मंदिर में 'सहस्त्रनाम' का जाप बैठाना, देवी-आश्रम में हवन-यज्ञ करना, 'अग्नि देवाय सोहा - इंद्र देवाय सोहा' पूजा-अर्चा करना इत्यादि क्रिया अंधविश्वास के प्रतीक मालूम होते हैं।

देवगांव और बेवहारी गांव में अकाल पड़ने पर भी ग्रामवासियों द्वारा किये गये उपायों में भी अंधविश्वास दिखाई देता है। बरसात नहीं होने के कारण गांव में भीषण अकाल पड़ जाता है तब लोग कहते हैं कि - "ब्राह्मणों से हल जुतवाया जाय तब पानी बरसेगा।" इस कथन से स्पष्ट होता है कि ब्राह्मण यदि हल चलायेंगे, तब बरसात अवश्य होगी, और अकाल की समस्या का समाधान हो जाएगा। इसके पीछे भी उन लोगों का अज्ञान दिखाई देता है। अंधविश्वास के कारण ही वे लोग गांव के सभी ब्राह्मणों को इकट्ठा करके हल जुतवाते हैं। फिर भी बरसात नहीं होती है।

'धरती धन न अपना' उपन्यास में पंजाब-प्रांत के रल्हन गांव के लोगों में भी अंधविश्वास दिखाई देता है। उस गांव में लोग अपनी मनोकामना की पूर्ति के लिए तथा गांव में आये अचानक संकट से मुक्ति पाने के लिए बकरे की बलि देते हैं। गांव में चमादड़ी के बाहर 'चो' के पार साईभल्ले शाह की टूटी-फूटी मजार है। जिसके बारे में लोगों में यह धारणा प्रचलित है कि मजार के सामने यदि कोई सरसों के तेल का दिया जलाता है तो उसकी सभी मनोकामना की पूर्ति हो जाती है। उपन्यास में उपन्यासकार ने दु:खी, बीमार, संकट-ग्रस्त चमारिन का कब्र के सामने सरसों के तेल का दिया जलाने का चित्रण किया है। काली की कबड्डी के मैदान में कूल्हे की हड्डी टूटने पर उसकी चाची ने वीरभान को डेढ़ दाना फेंककर चोट जल्दी ठीक होने की इच्छा व्यक्त करती है। काली के छह साल बाद गांव वापस आने पर उसकी चाची खुशी का इजहार और लोगों में इस बात की अप्रत्यक्ष जानकारी देने के लिए गांव में शक्कर बांटती है। गांव में अचानक तेज बरसात के कारण आई बाढ़ के संकट से मुक्ति पाने के लिए लालू पहलवान के सुझाव पर बकरे की बलि दी जाती है। इन सभी कार्यों को करने के पीछे

उन लोगों की अंधश्रद्धा दिखाई देती है। काली की चाची की मृत्यु के बाद उसकी जलती हुई लाश को ठोकर मारने से मृतात्मा को मुक्ति मिलती है तथा चिता पर देशी घी डालने से मृत व्यक्ति बहुत ही पुण्यात्मा या ऐसा समझने की प्रवृत्ति गांव के लोगों में देखने को मिलती है तथा उनके इस विचारधारा के पीछे कोई वैज्ञानिक कारण नहीं नजर आता है अतः हम इसे अंधश्रध्दा ही कहेंगे।

'मोरी की ईंट' उपन्यास में दीक्षित जी ने उत्तरांचल के अलीगढ़, मेरठ, अल्मोड़ा इत्यादि क्षेत्रों में स्थित मेहतर जनजातियों में स्थित अंधविश्वास पर विचार किया है। भविष्य देखना, देवी-देवता पर विश्वास रखना आदि के बारे में अंधविश्वास दिखाई देते हैं। भविष्य के बारे में ब्राह्मणों से जानकारी प्राप्त करने के उपरान्त यदि उन्हें दक्षिणा नहीं दिया तो घोर नरक की प्राप्ति होती है। इसके विषय में अग्निहोत्री कहता है - "बिना दक्षिणा दिये यदि ब्राह्मण से भविष्य काल पूँछोगे तो, तुम्हारी सौ-सौ पीढ़ियाँ रौरव और कुम्भीपाक नरकों में पड़ी रहेंगी।" उस अंचल मे देवी-देवताओं की यात्रा करना, वहाँ दक्षिणा बांटना, फकीरों, भिखमंगों, अपाहिजों को भोजन कराना, दान-दक्षिणा देना आदि अनेक प्रकार की प्रवृत्तियाँ लोगों में दिखाई देती है। उनमें ऐसी धारणा भी है ऐसा करने से देवी-देवता प्रसन्न होते हैं। जब सैमुअल को पहली तनख्वाह मिलती है, तब उसकी ताई देवी-देवता के थान पर जाकर दान करना चाहती है। वह कहती है - "मैं तो अपने बेटे की कमाई कीखुशी में बड़े-बूढ़ों के देवता के थान पर कल सिन्नी जरूर बाटूँगी।"[11] इसके पीछे उनकी भावुकता और श्रद्धा तो अवश्य दिखाई देती है, परंतु उन पर अंधश्रद्धा का प्रभाव जादा है।

'एकलव्य' उपन्यास में चंद्रमोहन प्रधानजी ने महाभारत की कथा का आधार लेकर निषाद जाति के संदर्भ में समाज में स्थित अंधश्रद्धा की ओर दिशा-निर्देश के साथ-साथ विद्वानों में भी पाप-पुण्य की बातों के द्वारा अंधविश्वास को दर्शाया है, एकलव्य धनुर्विद्या की शिक्षा की प्राप्ति के लिए गुरू द्रोण के पास जाता है तब आचार्य कहते हैं - "आर्यावर्त में राजवर्गों और सम्राटों के लिए जो शिक्षा गर्व का कारण होगी, उसे वनवासी, निषाद ऐसी हीन जातियों में वितरित कर उसका अवमूल्यन करूँ। यह विचार भी मेरे लिये असह्य है। नहीं, ऐसा पाप द्रोण से नहीं होगा...।"[12] यहाँ पर पाप-पुण्य संबंधी अंशविश्वास दिखाई देता है। एकलव्य हीन, अछूत, निषाद जाति का होने के कारण उसे शिक्षा-व्यवस्था से दूर रखा जाता है। आचार्य द्रोण द्वारा उसे शिष्यत्व न देना, उसे धनुर्विद्या का ज्ञान न देना आदि के पीछे समाज व्यवस्था और अंधविश्वास ही रहा है ऐसा दिखाई देता है।

रामधारी सिंह दिवाकरजी ने 'आग-पानी आकाश' उपन्यास में झिटकी बभनगामा तथा दरभंगा अंचल में रहने वाले लोगों में स्थित अंधविश्वासों पर विचार किया है। निम्न जाति के लोगों के स्पर्श से कोई भी वस्तु अपवित्र हो जाती है, परंतु लोहे की वस्तु अपवित्र नहीं होती है, ऐसी उस गांव के सवर्णों की मान्यता है। गांव के स्कूल में लोहे के चांपाकल के बारे में यही लोगों की धारणा रही है। स्कूल का चांपाकल लोहे का होने के

कारण 'छुआता' नहीं है। इसी कारण बब्बन धोबी के लड़के युगेश्वर और भागवत को तथा चमार तेली के बच्चों को पानी पीने का अधिकार दिया गया।

आज का युग विज्ञान का युग होने पर भी अज्ञान और अशिक्षा की अधिक मात्रा होने के कारण समाज में अंधविश्वास दिखाई देता है। दलित जीवन इसके लिए अपवाद नहीं है। रूढ़ि-परंपरा के प्रति निष्ठा, विज्ञान का अभाव, दुर्बल मानसिकता, धार्मिक डर आदि के कारण अंधविश्वास बढ़ रहा है ऐसा लगता है। समाज सेवी संस्था, व्यक्ति, अंधश्रद्धा निर्मूलन समिति का कार्य, धीरे-धीरे होने वाला शिक्षा प्रसार के कारण अंधविश्वास की मात्रा कम होने लगी है। आलोच्य उपन्यासों में 'धरती धन न अपना' का डॉ.बिशनदास और काली, 'खारे जल का गांव' का अरविन्द आदि पात्र इसी बात के प्रमाण हैं जो अंधविश्वास मिटाने की कोशिश कर रहे हैं।

(ब) भूत-प्रेत, चुडैल-डायन की समस्या :-

आधुनिक वैज्ञानिक प्रगती और सभ्यता एवं संस्कृति के प्रभाव से दूर दलित का जीवन भ्रम, भय एवं अज्ञान से संचलित रहा है। मानसिक दुर्बलता और अंधश्रद्धा का समन्वित रूप भूत-प्रेत, चुडैल-डायन संबंधी धारणा ही है। दलितजनों का आज भी इस पर विश्वास रहा है। दलित जनजाति बीमारी दूर करने के लिए, बांझपन हटाने के लिए, संकट से मुक्ति के लिए भूत-प्रेत का आधार लेते हैं। असामायिक मृत्यु, अतृप्त आत्मा भूत योनि में प्रवेश करती है ऐसी उनकी धारणा है। अमरसिंह रणपतिया के मतानुसार - ''शिक्षा-प्रचार और प्रसार से ऐसे विश्वासों में ढील आना स्वाभाविक है। कई अंधविश्वास सुसंस्कृत लोगों पर भी छाये हुए हैं। विज्ञान के चमत्कारों ने इस प्रकार के विश्वासों को अवश्य झकझोरा है।''[13] गांवों में कोई अघटित भयावह, दानवी घटना घटती है तो उसका सम्बन्ध भूत-पिशाच के साथ जोड़ने की उनकी प्रवृत्ति है। आलोच्य उपन्यासकारों ने इस प्रवृत्ति पर प्रकाश डाला है।

'खारे जल का गांव' उपन्यास में डॉ.भगवती प्रसाद शुक्लजी ने देवगांव और बेवहारी गांव में स्थित भूत-प्रेत, चुड़ैल-डायन, संबंधी अंधविश्वास पर प्रकाश डाला है। बेवहारी गांव के लोग पुराने मकान या खंडहर को 'भुतहा डेरा' कहा जाता है। उनकी धारणा है ऐसे मकान में भूत-प्रेत, डायन या अतृप्त आत्मा रहती है। बेवहारी गांव में एक पुराना इमली का पेड़ है उसे लोग 'भुतही इमली' कहते हैं। इससे उनकी मानसिकता स्पष्ट होती है।

ठाकुरों के अत्याचार से पीड़ित गांव की नारियाँ आत्महत्या करती हैं। ऐसी नारियों की प्रेतात्मा गांव में घूमती है। ऐसी भी उनकी धारणा है। फुलहा तालाब से गीले कपड़े पहनकर लौटने वाली औरत की ठाकुर ने कोड़ों से पिटाई कराई। अंत में औरत ने फांसी लगाकर आत्महत्या कर ली। उसकी प्रेतात्मा ठाकुर का पीछा

करती है। और रात में उसकी आंखें उनके बदन में गड़ती है। ऐसी उनकी मान्यता है। यहाँ स्पष्ट है टूटे-फूटे मकान या आत्महत्या करने वाले व्यक्ति को चुड़ैल, भूत-प्रेत माना जाता है।

'धरती धन न अपना' उपन्यास में जगदीशचंद्र जी ने पंजाब प्रांत के रल्हन गांव में रहने वाले हरिजनों में स्थित भूत-प्रेत, चुड़ैल-डायन संबंधी विचारों को स्पष्ट किया है। किसी को जिन्दा जलाने से उसका भूत बनता है तथा वह भूत किसी जीवित व्यक्ति के शरीर में प्रवेश करता है जिसके कारण व्यक्ति बीमार पड़ जाता है। ऐसी उनकी धारणा है। बीमार चाची प्रतापी को देखकर रख्खा कहता है - ''डाकू हरवेल सिंह को पुलिस ने जिन्दा जलाया था। उसी का भूत चाची की शरीर में प्रवेश कर गया है।''[14] इस भूत को उतारने के लिए धूप, लाल मिर्च, कुछ खाने-पीने का सूखा राशन, दूध और पैसे मंगाया जाता है। मंत्र पढ़कर जमीन पर चिमटा पटककर भूत निकालने की बात कही जाती है। भूत निकालने के बाद पीड़ित व्यक्ति को पांच दिन तक कोई सफेद चीज नहीं दी जाती। यदि सफेद चीज खाने को दिया जाय तो भूत फिर शरीर में प्रवेश करेगा। इस धारणा के पीछे उनका अंधविश्वास और उनकी कमजोर मानसिकता दिखाई देती है।

चुड़ैल के बारे में भी उनमें कई धारणाएं हैं। ज्ञानों को जहर देकर उसकी माँ द्वारा मारने के बाद मुहल्ले के हर व्यक्ति ने उसे कंधा दिया था जिससे वह चुड़ैल बनकर किसी को परेशान न करे। मृतात्मा के बारे में ग्रामवासियों के मन में डर की भावना है जो आज भी दिखाई देती है।

'आग-पानी आकाश' में रामधारी सिंह दिवाकरजी ने झिटकी बभनगामा गांव में चमार जाति में भूत-प्रेत-चुड़ैल संबंधी अंधविश्वास पर विचार किया है। यहाँ के लोग बभनी भूत से पीड़ित हैं। बभनियाँ पोखर के बीचोबीच गड़े जाट के बारे में कहा जाता था कि 'जाट' पर बभनी का भूत रहता है जिस विधवा ब्राह्मणीने पोखर बनवाया था उसके मरने पर उसका शवदाह घाट के पश्चिम मोहार पर किया गया था, उसी घाट पर बुढ़िया भुतनी बनकर रह रही है। जो भी घाट के पास जाएगा, उसका वह गला घोंट देती है। एक बार वहाँ एक बच्चा डूबकर मर गया था, तबसे भुतनी की बात पर अधिक विश्वास बैठ गया। यहाँ स्पष्ट है बभनी का भूत उन लोगों की दबी मानसिकता को दर्शाता है।

यहाँ स्पष्ट है भूत-प्रेत-चुड़ैल-डायन संबंधी विचारधारा, मानसिक दुर्बलता एवं विकृति का प्रतीक होने पर भी दलित लोग उस पर विश्वास रखते हैं। मंत्र-तंत्र का प्रयोग करने वाले लोग इसी के बल पर अमानवीय कार्य दिखाकर इस अंधविश्वास को अधिक बढ़ावा दे रहे हैं। ऐसा लगता है। जब विज्ञान का प्रभाव अधिक पड़ेगा,तब धीरे-धीरे ये समस्या हल होगी।

(क) मंत्र-तंत्र, झाड़-फूँक, जड़ी-बूटी, जादू-टोना सम्बन्धी अंधविश्वास की समस्या :-

दलित समाज अज्ञानी, अंधश्रध्द होने के कारण भूत-पिशाच संबंधी मान्यताएं उनमें रही है। परिणामत: उस पर उपाय के रूप में मंत्र-तंत्र, जादू-टोना तथा बीमारी दूर करने के लिए झाड़-फूँक - जड़ी-बूटी का प्रयोग किया जाता है। आधुनिक ज्ञान-विज्ञान, चिकित्सा सुविधा का अभाव होने के कारण इसे बढ़ावा मिल रहा है। दलित लोग दवाइयों की अपेक्षा दुवा पर अधिक विश्वास रखते हैं। जड़ी-बूटी का प्रयोग करते हैं। स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यासों में दलितों में स्थित इस अंधविश्वास तथा मान्यता पर गहराई से सोचा है। आलोच्य उपन्यास इसके प्रमाण हैं।

'धरती धन न अपना' उपन्यास में जगदीशचंद्र जी ने मंत्र-तंत्र, झाड़-फूँक-जड़ी-बूटी, जादू-टोना संबंधी अंधविश्वास पर प्रकाश डाला है। काली की चाची जब बीमार होती है, तब लोग कहते हैं - डाकू हरवेल की मृतात्मा ने उसके शरीर में प्रवेश किया है। चाची को दवा-दारू देने पर भी जब कोई लाभ नहीं हुआ तब झाड़-फूँक-जादू-टोना करने वाले मांत्रिक रख्खा को बुलाया जाता है। वह बताता है कि इसके शरीर में प्रेत ने वास किया है। जब कोई नया मकान बनाया जाता है तो उसमें प्रेत आ जाते हैं। प्रेतों को निकालने के लिए मंत्र-तंत्र - झाड़ - फूँक का करना आवश्यक है।

चाची को डाकू हरवेल सिंह की मृतात्मा से मुक्ति दिलाने के लिए मंत्र-तंत्र पढ़कर, लाल मिर्च जलाकर, चिमटा जमीन पर पटककर कहा जाता है कि भूत चला गया। अब दुबारा भूत नहीं आयेगा। मांत्रिक रख्खा ने कहा मेरे सामने भूत नहीं ठहर सकता, भूल चले जाने के बाद व्यक्ति कमजोर होता है। ऐसे व्यक्ति को सफेद खाना नहीं खिलाया जाता। इस प्रकार उपन्यासकारने मंत्र-तंत्र संबंधी अंधविश्वास का चित्रण किया है।

(ड) शुभ-अशुभ संबंधी अंधविश्वास की समस्या :-

दलित लोग अंधविश्वासी और अज्ञानी होने के कारण शकुन-अपशकुन पर विश्वास रखते हैं। अपने जीवन में घटनेवाली घटनाओं का भविष्य के साथ संदर्भ जोड़ने की उनकी प्रवृत्ति आलोच्य उपन्यासों में दिखाई देती है। इन उपन्यासों के आधार पर हम यहाँ दलित जीवन में स्थित शकुन-अपशकुन संबंधी अंधविश्वास की समस्या पर सोचेंगे -

भगवती प्रसाद शुक्लजी ने 'खारे जल का गांव' में विंध्याचल अंचल में स्थित शकुन-अपशकुन संबंधी समस्या पर प्रकाश डाला है। चसिया की शादी के अवसरपर घी की मटकी का गिरना अपशकुन मानकर उसका विवाह रोका जाता है। और 'मोरी की ईंट' में मदन दीक्षित ने उत्तराखंड में स्थित मेहतर जातियों में बेटी के जन्म को अशुभ मानने की बात कही है। जोशी और पंत परिवार में एड्गर और जेनी दाम्पत्य को पहली संतान

लड़की पैदा होने पर दोनों परिवार दु:खी होते हैं। ''बेटी का जन्म तो इस देश के हर एक धर्म में अशुभ माना जाता है।''[15] यहाँ स्पष्ट है धर्म का संबंध शुभ-अशुभ घटना के साथ जोड़कर एक नई विचारधारा स्थापित करने की कोशिश की गई है। यहाँ स्पष्ट है किसी का मुँह न देखना, या किसी वस्तु का गिरना अशुभ मानना इसके लिये कोई वैज्ञानिक आधार नहीं। वर्तमान काल में घटनेवाली घटना का संबंध भविष्य के साथ जोड़ना अज्ञान का ही प्रतीक है। पढ़े-लिखे लोग भी इस समस्या से पीड़ित हैं। इसका विरोध कम मात्रा में हुआ है।

(इ) पाप-पुण्य संबंधी समस्या :-

भारतीय समाज व्यवस्था में धर्म को महत्वपूर्ण स्थान दिया है। धर्म एक ऐसी संस्था है जो मानव जाति में सामूहिकता की भावना पैदा करती है। जब कोई विश्वास अथवा दार्शनिक सिद्धान्त विश्वास एवं सामान्य होकर किसी समाज अथवा समुदाय में व्यावहारिकता प्राप्त कर लेता है. तब उसे धर्म की संज्ञा प्राप्त होती है। धर्म ही समाज के विकास की मजबूत संस्था है।[16] जीवन में घटने वाली घटनाओं को पाप-पुण्य, अच्छी-बुरी आदि दृष्टि से देखा जाता है। पाप-पुण्य संबंधी यह धारणा है कि जो व्यक्ति सत्कर्म करता है वह इहलोक तथा परलोक में सुख प्राप्त करता है और जो व्यक्ति दुष्कर्म करता है वह कष्ट प्राप्त करता है। पाप और पुण्य व्याख्या सापेक्ष शब्द है। अर्थात इन शब्दों की व्याख्या व्यक्ति-व्यक्ति के अनुसार भिन्न होती है। ''संसार में पाप कु छ भी नहीं है, वह केवल मनुष्य के दृष्टिकोण की विषमता का दूसरा नाम है।''[17] आलोच्य उपन्यासकारों ने दलित समाज में स्थित पाप-पुण्य संबंधी समस्या पर विचार किया है।

'एकलव्य' उपन्यास में पाप-पुण्य संबंधी समस्या के बारे में चंद्रमोहन प्रधानजी ने प्रकाश डाला है। महाभारत काल में निषाद, वनवासी, अछूत, दलित जाति के लोगों को शिक्षा देना पाप कर्म माना जाता था। एकलव्य धनुर्विद्या का प्रशिक्षण पाने हेतु आचार्य द्रोण के पास जाता है और उन्हें अपना गुरू बनाने तथा उनसे ही शिक्षा ग्रहण करने की बात को अपना चिर स्वप्न कहता है। तब आचार्य द्रोण कहते हैं कि- ''जो शिक्षा आर्यावर्त के राजवर्ग और भावी सम्राटों के लिये गर्व का कारण है उसे वनवासी निषाद ऐसी हीन जातियों में वितरति कर उसका अवमूल्यन करूँ। यह विचार भी मेरे लिये असह्य है। नहीं, ऐसा पाप द्रोण से नहीं होगा।''

पाप-पुण्य का संबंध जीवन दृष्टिकोण की अपेक्षा धर्म के साथ अधिक जोड़ दिया है। पाप-पुण्य की निश्चित परिभाषा संभव नहीं। मनुष्य न पाप करता है न पुण्य, बल्कि अपने जीवन से जुड़े नित्यकर्मों को पूरा करता है। सुख देने वाली घटना को पुण्य मानता है तो पीड़ा देने वाली को पाप। महाभारत काल में शिक्षा व्यवस्था को लेकर पाप-पुण्य की धारणा है, वह शोषण का आयाम रही है। इसके पीछे मानसिक दुर्बलता अधिक रही है।

निष्कर्ष :- उपर्युक्त अंधविशवास के विविध आयामों को देखने के पश्चात यह स्पष्ट होता है कि दलित लोग अज्ञान, अशिक्षित, अंधश्रद्ध, नये वैज्ञानिक विचारों से दूर, धर्म, जाति, देवी-देवता, साधू-महंत, भगत,

मांत्रिक आदि के प्रभाव में होने के कारण अंधविश्वासी रहे हैं। इक्कीसवीं सदी में भी वैज्ञानिक दृष्टिकोण का प्रभाव बढ़ने पर भी अंधविश्वास दिखाई दे रहा है। अंधविश्वास के कारण लोगों का शोषण हो रहा है। धर्म, देवी-देवता का डर दिखाकर मांत्रिक-तांत्रिक लोग मंत्र-तंत्र-जड़ी-बूटी को बढ़ावा दे रहे हैं। दवा की अपेक्षा दुवा पर लोगों का विश्वास होने के कारण मंत्र-तंत्र अंधविश्वास की समस्या बढ़ रही है।

मनोकामना की पूर्ति के लिए रूढ़ि-परंपरा का पालन करने वाला दलित समाज अंधविश्वास का शिकार बना है। पाप-पुण्य, शुभ-अशुभ संबंधी उनकी धारणा अनोखी लगती है। बलि-प्रथा का पालन करना, लड़की के जन्म को पाप मानना ये विचारधारा अमानवीय है। आज धीरे-धीरे मुक्त और अनिवार्य शिक्षा के कारण दलित समाज शिक्षित हो रहा है। नववें और दसवें दशक के उपन्यास में अंधविश्वास का अल्पमाता में चित्रण हुआ है - ऐसा दिखाई देता है।

3) शोषण की समस्या :-

भारतीय समाज में जाति-व्यवस्था का स्थान महत्वपूर्ण हैं। जातीय व्यवस्था के कारण समाज की एकता खंडित हो रही है। समाज में ऊँच-नीच, सवर्ण-दलित आदि कई भेद खड़े हो गये हैं। इस सामाजिक भेदाभेद के कारण शोषण की समस्या को प्रश्रय मिला। ऊँच-नीच भेदाभेद के कारण समाज का ऊपर का तबका निचले सामाजिक तबके का शोषण करता रहा है। ''भारतीय समाज में वर्ण-व्यवस्था मे शक्ति और धन के आधार पर सवर्णों को इज्जत, सम्मान, प्रतिष्ठा के अधिकारी बनाया है। ग्रामों में तो दलित युवतियाँ उनके पंजे में फंसकर उनके विलास की सामग्री बनती हैं।''[18] जातीय वर्णव्यवस्था तथा वर्णव्यवस्था के कारण दलितों का शोषण हो रहा है। समाज का मध्यम वर्ग और उच्च वर्ग भी शोषण की समस्या से पीड़ित है। ''जब तक मनुष्य मात्र के प्रति मनुष्य के हृदय में प्रेम का भाव अविर्भूत न हो मनुष्यता कैसे टिकेगी ? कहीं व्यक्ति का, कहीं समाज और कहीं राष्ट्र एक दूसरे का शोषण करेंगे ही।''[19] दलितों के होने वाले शोषण पर यह कथन प्रकाश डालता है। अज्ञान, अंधश्रद्धा के कारण दलितों का जमींदार, सरकारी अफसर, धार्मिक व्यक्ति, राजनीतिक नेता, महाजन, साहूकार आदि के द्वारा शोषण हो रहा है। हिन्दी उपन्यासकारों ने दलित जीवन की समस्या के अंतर्गत कहाँ तक सोचा हैं? उस पर हम प्रकाश डालेंगे।

(अ) जमींदारों द्वारा शोषण की समस्या :-

भारतीय समाज व्यवस्था में स्वातंत्र्यपूर्व और स्वातंत्र्योत्तर काल में जमींदार वर्ग अत्याचार और शोषण का प्रतीक रहा है। यह वर्ग सत्ता और धन के बलपर सामंतीवादी प्रवृत्ति को बनाये रखने की कोशिश करता हुआ दिखाई देता है। कानून से जमींदार प्रथा समाप्त हो गई है परंतु जमींदारों की ऐंठन अभी भी दिखाई देती है। उनकी नई-नई प्रवृत्ति, शोषण की नीति, दमनचक्र के हथकंडे आदि के दर्शन उपन्यासों में होते हैं।

दलित किसानों की जमीन हड़प करना, उनसे बेठबिगारी लेना, मजदूरी देने से इंकार करना, उनकी नारियों की अस्मत को दिन-दहाड़े लूटना, उन पर झूठे आरोप लगाकर उन्हें जेल भेजना, उनका कत्ल करना, गंदी राजनीति का सहारा लेना, पुलिसों को अपना पक्षधर बनाकर लोगों पर जुल्म करना आदि कई रूपों में दलितों का शोषण आज भी कर रहे हैं। इस समस्या का चित्रण आलोच्य उपन्यासों में किस हद तक सफल हुआ है, इसे हम देखेंगे -

डॉ. भगवती प्रसाद शुक्ल के 'खारे जल का गांव' (1972) में विध्याचल वासी दलित ठाकुर, जमींदारों के हाथों से पीसे जा रहे थे। सुग्रीव और नरइना को ठाकुर करन सिंह द्वारा पीटना, चतुरी का कत्ल करना, ठाकुरों की आज्ञा का उल्लंघन करने वाले ब्राह्मणों को पीटना, पंडित व स्त्रियोंद्वारा खुदकुशी करना, पुलिसों को तीन सौ रूपये देकर स्त्रियों को बंदी बनवाना, काम पर आयी स्त्रियों की अस्मत को लूटना, अवरोध करने वाली स्त्रियों पर चोरी का इल्जाम लगवाना आदि विविध तरीके से जमींदार इन लोगों का शोषण करते हैं। चनकी की अस्मत लूटने में असफल जमींदार किस्सू सिंह इसका अच्छा उदाहरण हो सकता है।

जमीदारों द्वारा गंदी राजनीति का प्रयोग करना, चुनाव में हारने पर विपक्षी दल पर तथा उनके विजयी जुलूस पर लाठी चार्ज करवाना, विजयी अरविन्द को जख्मी करना ये घटनाएं जमीदारों द्वारा होने वाले शोषण पर प्रकाश डालती हैं। इस घटना पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए उपन्यासकार कहते हैं - ''स्वतंत्रता के बाद भी देश की पुलिस ने जिस बहशीपन के साथ लोगों को घसीट-घसीटकर मारा यह देखकर लोगों के मस्तक झुक गये।''[20] यहाँ जमींदारों की ईर्ष्या और शोषण की नीति तथा पुलिसों के साथ उनके संबंध आदि बातें स्पष्ट होती हैं।

'धरती धन न अपना' में जगदीशचंद्र जी ने जमींदारों द्वारा होने वाला दलितों का शोषण विस्तृत रूप में चित्रित किया है। चौधरी द्वारा संतू चमार को गालियाँ देना, गर्दन मरोड़कर जूतों से पिटाओी करना, मुहल्ले वालों को धमकाना, जेल भिजवाने और कत्ल करने का डर दिखाना, औरतों की अस्मत लूटना, मालिश करवाना, बेगार लेना आदि कई विविध आयामों में चमारों का शोषण जमींदार करते हैं।

चौधरी हरनाम सिंह चमादड़ी में जाकर संतू की पिटाई करता है। परंतु कोई भी चमार आगे आकर संतू की रक्षा नहीं करता। मंगू चमार द्वारा जीतू की शिकायत करने पर चौधरी कहता है - ''कुत्ता-चमार चमड़ी उधेड़ दूँगा। हराम की औलाद, तेरी मैं बोटी-बोटी कर दूँगा।''[21] यह कहकर चौधरी ने उसकी पिटाओी की। चौधरी हरनाम सिंह का बेटा हरदेव सिंह चमारों से मालिश करवाता है। चौधरी मुंशी मुफ्त में जूते बनवाकर ले जाता है। जब पैसे की मांग की जाती है तब वह कहता है -'चमारा तेरी यह हिम्मत ? तेरे बाप-दादा मेरे टुकड़ों पर पलते रहे हैं। मैं तुम दोनों को जिन्दा जमीन में गाड़ दूँगा।' तो दूसरी ओर तीन दिन तक पूरी चमादड़ी चौधरी के यहाँ काम करती है परंतु किसी को भी एक पैसा तक नहीं दिया जाता। चौधरी हरनाम सिंह का कथन

जमींदारों की नीति स्पष्ट करती है वह कहता है - ''तुम्हें किसने कहा था कि इस काम के पैसे मिलेंगे।'' चौधरियों की बेगार लेने की भी नीति रही है। मंगू के बाप ने चौधरी हरनाम सिंह से पांच सौ रूपये लिये थे। उन्होंने सारी उम्र भर, काम किया। अंत में मर गया। परंतु कर्जा नहीं उतरा। इस प्रकार उपन्यासकार ने जमींदारों के शोषण के विविध रूपों को विस्तार के साथ चित्रित किया है।

'आग-पानी आकाश' में दिवाकरजी ने जमीदारों द्वारा होने वाले शोषण को भी चित्रित किया है। बाबू भूपतिनारायण सिंह जमींदारी प्रवृत्ति के प्रतीक हैं। नारियों की अस्मत लूटना, लोगों से बेगार लेना, उन्हें यातनाएं देना, दलितों कीजमीन और मकान नीलाम करनावा आदि शोषण के विविध आयामों को अपनाकर अपनी जमींदारी शोषण नीति स्पष्ट करता है।

निष्कर्ष :- यहाँ स्पष्ट है हिन्दी के स्वातंत्र्योत्तर उपन्यासों में तत्कालीन समाज व्यवस्था, जमीदारों, ठाकुरों की शोषण नीति की कथा तथा उनके अमानवीय अत्याचारों के दर्शन होते हैं। कानून से जमीदारी प्रथा समाप्त हो गई है। परंतु जमींदारों की ऐंठन आज भी सुरक्षित लगती है। सत्ता और सम्पत्ति के बल पर राजनीति में, राजनैतिक नेताओं के साथ संबंध स्थापित कर, पुलिसों के साथ दोस्ती करके दलितों का वे शोषण कर रहे हैं। लोगों की पिटाई करना, नारियों की अस्मत लूटना, उनका कत्ल करना, बेगार लेना, मजदूरी न देना, उन्हें जेल भेजना, झूठे मुकदमें में फंसाना आदि विविध रूपों में शोषण हो रहा है। आज धीरे-धीरे शिक्षा का प्रसार होने के कारण अन्याय के खिलाफ विद्रोह की भावना बढ़ रही है। दलित संगठित होकर इसका मुकाबला कर रहे हैं। 'धरती धन न अपना' का काली और 'खारे जल का गांव' का अरविन्द और उनके साथियों का 'नवयुवक क्रांति मोर्चा', 'मोरी की ईंट' में मेहतरों द्वारा अन्याय के खिलाफ स्थापित किया गया 'मेहतर संघ' इसका प्रमाण है। यहाँ स्पष्ट है अब धीरे-धीरे दलितों मेंअपने ऊपर होने वाले अन्याय और शोषण के खिलाफ जागृति पैदा हो रही है।

(ब) धार्मिक व्यक्तिद्वारा शोषण की समस्या :-

धर्म और मानवी जीवन का अन्योन्याश्रित संबंध है। धर्म मानवी जीवन को नियंत्रित करनेवाली एक संस्था है, तो मानवी जीवन धर्म को विकसित करने वाली व्यवस्था है। धर्म, नैतिक-अनैतिक, पाप-पुण्य, सत्य-असत्य को स्पष्ट करने वाली संकल्पना है। धर्म के कारण देवी-देवता के साथ-ही-साथ ब्राह्मण, पंडित, पुरोहित, ओझा आदि धार्मिक क्षेत्र में कार्य करनेवाले धार्मिक व्यक्तियों को भी समाज में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त हुआ है। ''आज कई धर्म, धार्मिक कट्टरता की स्थिति में अब भी सकपका रहे हैं और कुछ इस क़ट्रता को त्यागकर धर्म निरपेक्षता की ओर अग्रेसर हैं।''[22] आज चाहे संसार धर्म निरपेक्षता की ओर बढ़ रहा है मगर प्राचीन काल से आज तक धर्म के नाम पर बलि देना, दक्षिणा पाना, दान लेना, धनकमाना, आशीष के नाम पर कुकर्म करना, अनैतिकता को बढ़ावा देना, मठों-विहारों को अपवित्र करना आदि रूप में धार्मिक व्यक्ति द्वारा

समाज का शोषण हो रहा है। अज्ञानी, अंधश्रद्ध दलित इसके लिए अपवाद नहीं हैं। हिंदी के उपन्यासकारों ने धार्मिक व्यक्ति द्वारा दलितों का होने वाला शोषण चित्रित किया है। उसमें उन्हें कहाँ तक सफलता मिली है ? उस पर आलोच्य उपन्यासों के आधार पर विचार करेंगे -

'खारे जल का गांव' उपन्यास में डॉ. भगवती प्रसाद शुक्ल जी ने धार्मिक व्यक्ति द्वारा होने वाले शोषण की समस्या पर विचार किया है। जब चमारिन शंकर-पार्वती के मंदिर में प्रवेश करती हैं तथा गीत गाती हैं तब पुजारी देवसेवक राम और पंडित गैबीदीन इसे धर्म भ्रष्ट कर्म मानते हैं और लाठी से उनकी पिटाई करते हैं। धार्मिक लोग पंचायत का आधार लेकर भी दलितों का शोषण करते हैं। जातिपंचायत में बैठने की व्यवस्था इसी का प्रमाण है। जब अरविन्द चमरहटी में शिक्षा केंद्र शुरू करता है, वहाँ पानी भी पीता है, तब धार्मिक पंडित पंचायत बुलाकर उसे दंडित करते हैं। उसे जाति से बहिस्कृत करने की, हुक्का-पानी बंद करने की सजा देते हैं। यहाँ स्पष्ट है धार्मिक व्यक्ति धर्म का आधार लेकर बेकसूर अज्ञानी लोगों का शारीरिक, मानसिक, आर्थिक शोषण करते हैं।

'धरती धन न अपना' में जगदीश चंद्रजी ने पंडित संतराम के माध्यम से चमारों का होने वाला धार्मिक शोषण स्पष्ट किया है। जब मंदिर के पास हरिजन और चमार जाति के लोग पहुँचते हैं तब पंडित संतराम उन्हें दूर जाने की बात करता है। वह उन्हें कुएं की जगत और मंदिर के चबूतरे पर फटकने भी नहीं देता। अछूतों के स्पर्श से धर्मस्थल भ्रष्ट या अपवित्र हो जाती है ऐसी उनकी धारणा है ऐसा लगता है।

निष्कर्ष :- यहाँ स्पष्ट होता है ब्राह्मण, पंडित धर्म का आधार लेकर जनता का शोषण कर रहे हैं। अंधविश्वास का प्रभाव अधिक होने के कारण ऐसे शोषण को बढ़ावा मिल रहा है। राजनीति के साथ धर्म और धार्मिक व्यक्ति का संबंध बढ़ने के कारण यह शोषण अधिक हो रहा है। धार्मिक भय, पाप-पुण्य, स्वर्ग-नरक संबंधी मान्यता आदि के कारण इस शोषण के खिलाफ आवाज सुनाई नहीं देती। राजनीति ने धर्म के क्षेत्र में प्रवेश करके धर्म के पवित्र मूल्यों को तहस-नहस कर दिया है तो धार्मिक व्यक्ति ने पवित्र मंदिरों का अपने स्वार्थ का अड्डा बनाया है, ऐसा लगता है, जिस पर उपन्यासकारों ने प्रकाश डाला है।

सरकारी अफिसर और पुलिस द्वारा शोषण की समस्या :-

आजादी के पश्चात भारत सरकारने अपनी विकास नीति के अनुसार समाज के सभी स्तर के लोगों के विकास के लिए पंचवर्षीय योजनाओं का प्रारंभ किया। इस विकास नीति के अनुसार नगर तथा गांवों तक सरकारी अफसरों की नियुक्तियाँ की गई। सरकारी विकास योजना का गांवों तक, हर एक मकान तक पहुंचना, हर एक व्यक्ति को उसका लाभ पहुँचाना इसी उद्देश्य से यह कार्य किया गया, परंतु इस कार्य में कितनी सफलता प्राप्त हो चुकी है यह एक अनुसंधान का विषय है। वास्तविक रूप में कागज से प्राप्त होने वाली विकास की

जानकारी और समाज में हुआ वास्तविक विकास में अंतर दिखाई देता है। विकास के आंकडे कभी-कभी झूंठे लगते हैं, इसके मूल में सरकार की विकास नीति नहीं बल्कि अफसरों की मनोवृत्ति है। आज यही सरकारी अफसरों की प्रवृत्ति शोषण का आयाम लगती है। पढ़ा-लिखा शिक्षित नागरी तथा गांवों में रहने वाला अज्ञानी, अशिक्षित, दलित या नारी इस समस्या की शिकार हैं। साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं में शोषण के इस रूप पर गहराई से चिंतन किया है।

रिश्वत लेना, झूठी उपस्थिति दिखाना, बेगारी लेना, काम का मूल्य न देना, नारी के साथ छेड़-छाड़ करना, उसकी अस्मत को लूटना, जेल का डर दिखाना, धमकाना, पिटायी करना, झूठे आरोप लगाना, बेकसूर लोगों को दंडित करना, आदि कई आयामों में सरकारी अफसरों द्वारा दलितों का शोषण हो रहा है। आलोच्य उपन्यासकारों ने इस समस्या को यथार्थ रूप में चित्रित किया है, उस पर यहाँ सोचेंगे।

भारतीय राजनीति के नियामक तत्व में सरकार और राजनीतिक दल के महत्व पूर्ण तत्व लक्षित होते हैं। सरकार अपनी व्यवस्था में पुलिसों की सहायता लेती है। सुरक्षा, शांति, बंधुता आदि कई कार्यों में पुलिस सरकार की मदत करती है। सामान्य जनता की रक्षा करना, आपत्ति में उनकी सहायता करना, समाज में शांति स्थापित करना, आदि कार्य करने वाली यह व्यवस्था आज शोषण का आयाम बनी है। अशिक्षित, अज्ञानी दलितों का पुलिस द्वारा किस रूप में शोषण होता है। इसका चित्रण हिन्दी उपन्यासों में हुआ है। जमींदार और पुलिस की दोस्ती होना, राजनीतिक नेता और पुलिस की सांठ-गांठ होना, समाज विघातक ताकदों से पुलिसों की मिली भगत होना, धार्मिक व्यक्ति के साथ पुलिसों की दोस्ती होना आदि के कारण सामान्य जनता एवं दलितों का पुलिस द्वारा शोषण हो रहा है। पुलिस रक्षक होने की अपेक्षा भक्षक बन रही है। पुलिसों को कुटिल एवं आतंकित वृत्ति से दलित वर्ग शोषित बना है। आलोच्य उपन्यासकारों ने विभिन्न घटनाओं के आधार पर इसे स्पष्ट किया है, इस पर हम विचार करेंगे -

डॉ. भगवती प्रसाद शुक्ल के 'खारे जल का गांव' 1972 में विंध्याचल में बसे देवगांव और बेवहारी गांवों में भी पुलिस शोषण के पहिऐ घूमने लगे हैं, ऐसा दिखाई देता है। पुलिस द्वारा मजदूरों के जुलूस पर लाठियाँ बरसाना, वहाँ भगदड मचना, हवा में फायर करना आदि घटनाएं पुलिस शोषण की नीति पर प्रकाश डालती हैं। स्वतंत्रता के बाद भी देश की पुलिस दलितों व मजदूरों पर इतना रोब गालिब कर रही है इसके दर्शन यहाँ होते हैं। यहाँ पुलिसों का दमनचक्र लक्षणीय है।

जब सुग्रीव नारियों पर हो रहे अन्याय के खिलाफ जुलूस निकालता है, तब पुलिस जमादार उसे कहता है, "क्यों रे खटिक के बच्चे ! बलवा करते हो, ऐसा मारूँगा की सिट्टी-पिट्टी गुम हो जाएगी ! नेतागिरी झाड़ते हो । ऐसा झापड़ दूँगा कि सब हेकड़ी भूल जाएगी। परजातंत्र न होता तो तू गिटिर-पिटिर करता।"[23]

जमादार का यह कथन उनके शोषण को ही स्पष्ट करता है। आजादी नहीं होती तो पुलिस और अधिक मात्रा में शोषण कर सकती, इसी बात का प्रमाण जमादार का कथन है।

भ्रष्टाचार और शोषण के विरुद्ध 'क्रांतिकारी युवा मोर्चा' जुलूस निकालता है तब डिप्टी कलेक्टर ने उस पर लाठी चार्ज किया, हवाई फायर किया, लोगों को घसीट-घसीट कर मारा तो दूसरी ओर 'साप्ताहिक क्रांति पथ' के दफ्तर पर पुलिस द्वारा छापा ड़ालना, लोगों की पिटायी करना, स्त्रियों की बेइज्जती करना, पंचायत चुनाव में विजयी अरविन्द के जुलूस पर लाठियाँ बरसाना, पुलिस शोषण के ही प्रमाण हैं। यहाँ पुलिसों की जमींदार और राजनीतिक नेताओं के साथ दोस्ती होने के कारण शोषण बढ़ रहा है, ऐसा लगता है।

'धरती धन न अपना' में जगदीश चंद्रजी ने अज्ञानी दलितों का पुलिस और अफसरों द्वारा होने वाला शोषण चित्रित किया है। सरकारी लोग दलितों के अज्ञान का फायदा उठाकर उनका आर्थिक शोषण करते हैं। उपन्यासकार ने मुंशी के माध्यम से इस बात को स्पष्ट किया है। मुंशीजी काली की अस्सी रूपये की मनीऑर्डर लेकर आता है। परन्तु उसे सवा उन्यासी रूपये देता है जब काली उन्हें कम रूपये देने की बात पूँछता है तो मुंशी बारह आने महसूल के नाम से लेता है। परंतु काली पढ़ा-लिखा पात्र होने के कारण वह कहता है महसूल तो प्रारंभ में ही मनीऑर्डर करने वालो ने दे दिया है।

सरकारी अफसर कई रूपों में, कई ढंगों से दलितों का शोषण करते हैं। पटवारी लोग, मुंशीजी, दरोगाजी जैसे सरकारी अफसर दलितों का किस प्रकार शोषण करते हैं, उस पर कई उपन्यासकारों ने प्रकाश डाला है। मदन दीक्षित ने 'मोरी की ईंट' में सरकारी अफसर और पुलिस द्वारा दलितों का और दलित नारी का किस प्रकार शोषण किया है, उसे यथार्थ शब्दों में स्पष्ट किया है। कोठी पर काम करने वाली मेहतर जाति की मंगिया के साथ हेल्थ ऑफिसर अवैध यौन संबंध रखता है तो चुंगी विभाग का जमादार हीरालाल मेहतर लोगों की तनख्वाह में से एक तिहाई पैसा लेता है तथा खूबसूरत दिखने वाली मेहतरानियों को प्रलोभन दिखाकर उन्हें अपने जाल में फंसाता है। ऐसी युवतियों को अफसरों और बाबुओं के पास भेजकर अपना अवैध धंधा चलाता है। आदि विविध घटनाओं के द्वारा उपन्यासकार ने दलितों का होने वाला शोषण स्पष्ट किया है।

'आग-पानी आकाश' में दिवाकरजी ने शिक्षित दलित अफसरों द्वारा अशिक्षित दलितों का किस प्रकार शोषण होता है उसे स्पष्ट किया है। दलितों के शोषण के इस नये रूप को उजागर करके उपन्यासकार ने शोषण के एक नये रूप को स्पष्ट किया है। भागवत बाबू ने बी.एस.डिग्री कॉलेज शुरू किया, वहाँ कर्मचारी और प्राध्यापकों की नियुक्ति के लिए दस हजार - पाँच हजार रूपये तक डोनेशन लिया। तो दूसरी ओर डी.सी.एल.आर. और एस.पी.साहब तथा वित्त सचिव श्री युगेश्वर करमलाल महतों पर झूठे आरोप लगाकर जेल भेल देते हैं।

भागवत और युगेश्वर दलित जाति का आधार लेकर आरक्षण का लाभ उठाकर सरकारी नौकरी और ठेका प्राप्त करते हैं। परंतु पद का आधार लेकर दलितों का शोषण करते हैं।

निष्कर्ष : - बीसवीं सदीं में शोषण का एक प्रभावी अंग पुलिस और सरकारी अफसरों द्वारा होने वाला शोषण लगता है। पुलिस की कुटिल नीति के कारण आतंक के दर्शन होते हैं। पुलिस और सरकारी अफसरों का राजनीतिक नेता लोग, जमींदार और पूँजीपतियों के साथ दोस्ती का संबंध होने के कारण शोषण का दमनचक्र निरंतर बढ़ रहा है। उनकी इस नीति के कारण नारी का जीवन अस्थिरबना हैं। शिक्षा के क्षेत्र में बेगार लेने की एक नई प्रवृत्ति उभर रही है। उस पर भी उपन्यासकारों ने अंगुली निर्देश किया है। आज पुलिसों का भय कम हुआ है, परंतु उनकी काली करतूतें आज भी दिखाई देती हैं। पुलिस एक तरफ से शासन की नीतियों से आवद्ध है तो दूसरी तरफ सामाजिक अपराध वृत्ति से। आज यह दमनचक्र तीव्र बनता जा रहा है ऐसा लगता है।

राजनीतिक नेताओं द्वारा शोषण की समस्या :-

आजादी के पश्चात भारत की राजनीतिक हलचल, राजनीतिक दलों की चहल पहल, राजनीतिक नेता लोगों की चाल-चलन का साहित्य में चित्रण होने लगा। आजादी से पहले राजनीति सेवा का साधन थी। आजादी के बाद वही सत्ता का माध्यम बनी। राजनीति के कारण देश में चुनावी माहौल बना, आजादी के पूर्व की राजनीति देशभक्ति एवे देश की आजादी के लिए उपयुक्त रही तथा आजादी के बाद उसका रूप परिवर्तित हुआ। वह शोषण का आयाम बनी। धर्म एवं जाति के नाम पर 'वोट' मांगना, वोट को खरीदना, विपक्षी नेताको लालच दिखाना या कत्लकरना आदि कई गंदी राजनीति के दर्शन होते हैं। जिसके कारण भारतीय समाज में और दलितों में एकता की अपेक्षा टकराव एवं बिखराव की भावना बढ़ रही है। डॉ.मृत्युंजय उपाध्याय के मतानुसार - ''उपभोक्तावादी संस्कृति और सुविधा की राजनीति समाज संस्कृति पर बलात्कार कर रही है। उसका संक्रमण, और विघटन कर रही है।'' आलोच्य उपन्यासों में दलितों के जीवन में राजनीति इस प्रकार समस्या बनी है तथा उसके कारण किस ढंग से शोषण हो रहा है उस पर हम यहाँ विचार करेंगे-

'खारे जल का गांव' उपन्यास में डॉ.भगवती प्रसाद शुक्लजी ने राजनीति की प्रारंभिक स्थिति के बारे में बताया है कि सरकारी आदेशानुसार जमींदारी प्रथा समाप्त कर दी गई तो विंध्याचल अंचल के जमींदार ठाकुर करनसिंह रातों रात काँग्रेस दल में सदस्य हो गये थे, जो कि उस समय एक मात्र राजनीतिक दल था। इस प्रकार वे अपने विचारों को जैसे का तैसे रखते हुए दिखावे के लिए कांग्रेस में शामिल हुए तथा राजनीतिक दलों द्वारा सरपंच बना दिये गये। यह इस प्रकार यहाँ उपन्यासकार ने स्पष्ट किया है - '' जब राजा का राज गया तो रातोंरात वे काँग्रेसी हो गये। कैसा बड़ा जलसा हुआ था इस गांव में। बड़े-बड़े मिनिस्टर आये थे और उन मंत्रियों ने कहा भी था कि करनसिंह जैसे त्यागी लोगों से ही देश तरक्की करेगा।'' इसप्रकार जमींदार लोग अपने इस

इथकंडे के द्वारा लोगों का शोषण करते रहे। लोग वही रहे, उनकी शोषण की प्रवृत्ति वहीं रही,परंतु उनके रूतबे वही रहे सिर्फ बदली तो उनकी पहिचान ही बदली। कुछ समय के पश्चात पार्टी ने उन्हें टिकट नहीं दी तो पार्टी बदलकरचुनाव लड़े,परंतु चुनाव हार गये।

बेवहारी और देवगांव में कालरा और हैजे का प्रकोप बढ़ने पर दौड़-धूप करने के पश्चात सरकारी नीति को जामा पहनाकर नेताओं द्वारा टीका लगवाने की मंजूरी मिलती है, परंतु कालरा का टीका लगाने के लिए पैसे लिये जाते थे। जो लोग टीका नहीं लगवाते थे, उनसे भी पैसे लिये जा रहे थे। इस प्रकार पैसे लिये जाने की सूचना प्राप्त होने पर अरविन्द का मन राजनीति और राजनेता के बारे में वितृष्णा से भर जाता है और वह क्षोभ व्यक्त करते हुए कहता है कि - "मैं अपने चारों ओर जिनको देख रहा हूँ, वे सब एक दूसरे के शोषण की घात में हैं। नेता अपनी रोटी सेंक रहे हैं, शासन अपनी अकड़ में डूबा है। किसी को जनता के प्रति सच्ची संवेदना नहीं है। आज गरीबी, भूख और अकाल देश की राजनीति के लिए न सिर्फ जरूरी है बल्कि यह उर्वरक तत्व बन गई है। इसी कारण राजनेता इसे कम नहीं होने देंगे क्योंकि गरीबी हटने पर वोट हटेगा और सम्पन्नता आने पर समझ और शिक्षा बढ़ेगी, जो कि उनके लिए खतरा हो जाएगा।"[24] अत: यहाँ स्पष्ट होता है कि आज की जो देश की स्थिति है उसे यथावत रखकर नेता लोग अपनी कुर्सी कायम रखने के पक्ष में हैं। हमारे देश की राजनीतिक स्थिति और चुनावी माहौल का गिरते हुए स्तर के लिए जमुना मास्टर पुराने लोग, उनकी विचारधारा, स्वार्थ परकता, सरकारी तंत्र, जनता की अशिक्षा आदि को जिम्मेदार मानते हुए कहते हैं - "जिस समाज के तरूण गैर जिम्मेदाराना कामों में समय बरबाद कर रहे हो और समाज के पुराने लोग अपने ही स्वार्थ तक केंद्रित हों, और चुनाव जातिवाद के आधार पर लड़ा जाता हो तथा जिस समाज में सत्तर प्रतिशत मतदाता अशिक्षित हों, और जहाँ पटवारी और मास्टर चुनाव अभियान चलाते हों, वहाँ पर किसी ठोस परिवर्तन की आशा करना या आशावाद होना व्यर्थ है।"

अरविन्द गांवों में तथा सरकारी कार्यालयों में चल रहे अन्याय व भ्रष्टाचार के खिलाफ आन्दोलन करने के लिए जब 'क्रांतिकारी युवा मोर्चा' बनाकर जुलूस निकालता है। जुलूस पर पुलिस द्वारा लाठी चार्ज करने पर घायल अवस्था में उसे अस्पताल में भरती किया जाता है। वहाँ प्रदेश के वरिष्ठ मंत्री पंडित कमलकांत उससे मिलने अस्पताल में आये। हाल जानने के बाद मंत्रीजी कहते हैं- "क्यों नाहक जीवन बर्बाद कर रहे हो? हमारे दल में आ जाओ, तुम्हें विधानसभा की सदस्यता का टिकट दिला देंगे।"[25] बेवहारी और देवगांव में जब पंचायत के चुनावों में जातिवाद का प्रभाव रहा है, जिसे रघ्घू पंडित के शब्दों द्वारा देखा जा सकता है - "ब्राह्मणों के सब 'वोट' विपक्ष को मिल जाएगा। अरविन्द को कोई ब्राह्मण घास नहीं डालेगा। अगर अरविन्द नीची जाति के सौ लोगों के वोट फोड़ले, तो जीत निश्चत है।" उस गांव के चुनावों की हालत अलग ही ढंग की

दिखाई देती है। जो किस इस देश के राजनीतिक माहौल का प्रतिनिधित्व करती है ऐसा लगता है। राजनारायण सेठ जी ने मजदूरों, कोलों, चमारों से खुले आम पांच रूपया प्रति वोट की बोली लगा देने पर अरविन्द कहता है - ''आज का चुनाव पैसे पर लड़ा जाता है। मारपीट करने वाले झुंडों और जाति के महंतों के समर्थन से लड़ा जाता है।''[26] मतदान के दिन मतदान केंद्र के पास रघ्घू पंडित का शामियाना लगा था जिसमें बीड़ी, चाय, पान का दौर चल रहा था। तो राजनारायण सेठ के शामियाना में मिठाई जलपान की व्यवस्था थी। मतदाता आने पर नाश्ता करवाया जाता और उनके नामों की पुर्जी देकर मतदान केंद्र में भेजा जाता था।

इस प्रकार उपन्यासकार शुक्लजी ने उपन्यास के माध्यम से आज के चुनावी माहौल का और राजनीति क्षेत्र में नये-नये निर्माण हो रही समस्याओं की तरफ अंगुली निर्देश करते हुए उसकी प्रवृत्तियों का पर्दाफाश किया है। जो कि आज के युग में भी वास्तविक दिखाई देती है।

'धरती धन न अपना' उपन्यास में जगदीशचंद्र जी ने पंजाब प्रांत के रल्हन गांव की राजनीतिक परिवेश का चित्रण कम ही किया है। वहाँ पर मार्क्सवादी विचारधारा के डॉ.बिशनदास द्वारा पूँजीपतियों के अत्याचारों के खिलाफ प्रोलतारी की बातें करते दिखाई देते हैं। जिसका थोड़ा सा प्रयोग गांव को बाढ़ से बचाने के लिए बांध को काटने पर हुए खड्डे (शगाफ) को भरने के लिए मजदूरों, चमारों को दिहाड़ी न देने पर संघर्ष होता है तथा चमारों द्वारा चौधरियों के काम न करने का 'बाईकाट' करने पर दिखाई देता है। उसी समय डॉक्टर बिशनदास काली से कहता है - ''पूँजीपति यह कभी नहीं चाहते कि मजदूरों में एकता हो। मुतवार्जी युनियन बनाना भी एक इम्पीरियलिष्ट चाल है मजदूरों के इत्तिदाद को तोड़ने की। जिस तरह बड़ी मछली छोटी मछली को खाती है उसी तरह बड़ा तबका छोटे तबके को एक्सप्लायट करता है, यानी उसकी मेहनत का फल उसे खाने नहीं देता बल्कि खुद खा जाता है। इसी से क्लास स्ट्रगल (वर्ग संघर्ष) पैदा होता है। लेकिन मार्क्सवादी इन्कलाब से यह तबका खत्म हो जाएगा और प्रोलतारिया का बोलबाला होगा। यह बेजमीन खेत मजदूरों और जमीदारों की लड़ाई है। यह प्रोलतारियों और पूँजीपतियों की जंग है।'' इस प्रकार यहाँ स्पष्ट है कि चुनावी राजनीति न होकर यहाँ पर पूँजीपतियों और मजदूरों की राजनीति तथा उससे उद्भूत समस्याओं पर विचार किया गया है।

'मोरी की ईंट' उपन्यास में मदन दीक्षितजी ने स्वतंत्रता के पूर्व देश विभाजन के समय का महासंग्राम और उसके बाद के चुनावी माहौल का चित्रण किया है। 1945 में नागासाकी और हिरोशिमा पर एटम बम गिराये जाने पर जापानियों के हथियार डालने की स्थिति के साथ-साथ भारत की राजनैतिक सत्ता के बदलाव का सिलसिला, केन्द्रीय और प्रांतीय असेम्बलियों के लिये सीमित मताधिकार के आधार पर चुनावों का दौर आदि के चित्रण हैं। कॉलेज के बोर्डों पर गांधी और नेहरू के खिलाफ गालियाँ लिख दिया करते थे। उसका असर मेहतरबस्तियों पर भी दिखाई देता था। साहू कन्हैयालाल कांग्रेसी हो गये थे तथा गांधी टोपी पहनकर

सतीश बाबू के आगे-पीछे घूमते थे। साहू कांग्रेसी होने के नाते ऊपर से तो शान्ति-शान्ति की बातें कर रहे थे लेकिन भीतर-ही-भीतर दंगाईयों को बढ़ावा दे रहे थे। हिन्दू मुहल्ले में रहने वाले मुसलमानों को हड़काकर, अपने पुस्तैनी मकानों को छोड़कर मुसलमान मौहल्ले में जाने के लिए मजबूर कर रहे थे। इस प्रकार राजनीतिक लोग जनता को आपस में लड़ाकर अपना उल्लू सीधा करते दिखाई देते हैं। विभाजन के समय देश में दंगाईयों ने कहर ढा दिया। औरतों की अस्मत दिन-दहाड़े लूटने पर भंगी समाज की 'घघरिया पल्टन' ने अपना रंग दिखाया। रम्पिया, रधिया और मंगिया ने सभी औरतों को इकठ्ठा करके लोगों द्वारा किये जा रहे अन्याय के खिलाफ लड़ाई लड़ी और अत्याचारपर अंकुश लगाया।

'एकलव्य' की कथावस्तु महाभारत युग की रही है। उस काल में ब्राह्मणों और क्षत्रियों का गठबंधन होता था। हीन कही जाने वाली जातियों को कोई महत्व नहीं था। ब्राह्मण गुरू धर्म नियंता, व्यवस्था, धर्म का व्याख्याकार और न्यायाधीश होता था तो क्षत्रिय शासन राजकाज चलाते थे। वे गुरूओं की मदद से कानून बनाते, उसका पालन दंडनीति से करते थे। ब्राह्मणों ने राजा को विष्णु का अवतार घोषित किया। राजा से दक्षिणा पाकर उनके ही मनोकुल व्यवस्थाएं, फतवे दिये। इस प्रकार ब्राह्मण और क्षत्रिय गठबंधन से राजनीति चलती रही तो दूसरी ओर धर्म का भय दिखाकर अन्य जातियों का शोषण शुरू हुआ। युद्ध के लिए क्षत्रिय आगे बढ़े, वैश्य. कृषि आदि सामान्य कार्य करते रहे। शूद्र सभी व्यवस्था से वंचित रहे। महाभारत काल में वर्ण-जाति का प्रश्न जन्मगत हो गया था। उच्चवर्ग के गुरु, उच्च वर्ण के छात्रों को ही धर्मादि की शिक्षा देते थे। परिणामत: अछूत वर्ग विद्याहीन एवं पिछड़ा ही रहा। गुरू राजाश्रित थे, परिणामत: राजनीति राजा पर निर्भर रही है। एकलव्य में चित्रित राजनीति इसका प्रमाण है। इसी राजनीति के कारण एकलव्य शोषित रहा। यहाँ स्पष्ट है जाति पर आधारित राजनीति सामान्य व्यक्तियों का शोषण करती है। आज भी इसके दर्शन होते हैं।

दिवाकरजी ने 'आग-पानी आकाश' में जातिगत भ्रष्ट राजनीति के बारे में सोचा है जिसका चित्रण यहाँ होता है। जाति और आरक्षण का लाभ उठाकर दलित नेता लोग शासन में ऊँचा पद प्राप्त कर लेते हैं परंतु सत्ता का उपयोग सेवा की अपेक्षा शोषण के लिये ही करते हैं। सुमरितलाल बैठा इसका प्रमाण है। तीन बार विधायक के रूप में चुने जाने के बाद भी भूविकास और कल्याण मंत्री बन जाते हैं। दलित लोग अपने नेता के रूप में उसे देखते हैं, परंतु किसी को ठेका देना, कोई योजना कार्यान्वित करने की अपेक्षा तबादला करना, सवर्णों को अपमानित करना आदि रूप में शोषण करते हैं। तो दूसरी ओर वैश्यंत्री साहब रिजर्वड़ कान्स्टीट्यूएंशी का लाभ उठाना चाहते हैं। वहाँ चमारों के वोट अधिक हैं इसलिए रामसजीवन को अपने स्वजातियों में जाकर चुनावी प्रचार करने की सलाह देते हुए कहते हैं - ''कान्स्टीट्युएंशी में सिर्फ अपनी जाति में घूमना। चमारों के भी बहुत वोट हैं, प्रचार करोगे ना?''[27] सरकारी अफसर राजनीति में सक्रिय बने बैठे हैं। जाति और अधिकार

का उपयोग करके राजनीति कर रहे हैं। वैश्यंत्री साहब इसके प्रमाण हैं। वे पर्दे की पीछे रहकर सब कुछ गंदी राजनीति कर रहे हैं। अछूत धोबी जाति का भागवत बाबू चुनाव जीत कर राज्य का मंत्री बन जाता है। राजसत्ता के आधारपर बी.एस.डिग्री कॉलेज की स्थापना करता है, परंतु प्राध्यापकों की नियुक्ति तथा अन्य कामों में वह रिश्वत लेता है। राजनीति के बल पर होने वाला यह अनोखा शोषण दिखाई देता है।

निष्कर्ष :- यहाँ स्पष्ट है कि आधुनिक काल में राजनीतिका संबंध धर्म और जाति के साथ जोड़ दिया है। आलोच्य उपन्यासों में इसके दर्शन होते हैं। धर्म, जाति, बिरादरी के नाम पर चुनाव लड़ना, आतंक जताना, वोटों को खरीदना, दल बदलने के लिए प्रोत्साहन देना, विपक्षी नेता का कत्ल करना, विजयी जुलूस पर लाठी प्रहार करना, जाति के आधार पर टिकट देना, आदि भ्रष्ट राजनीति के यहाँ दर्शन होते हैं। वह भ्रष्ट राजनीति दलितों का शोषण कर रही है। दलित नेता लोग अपने जाति के विकास के लिए कितना योगदान देते हैं? यह विवाद का विषय है। आलोच्य उपन्यासों में इसपर प्रकाश डाला है। प्रजातंत्र या लोकतंत्र में यदि सेवाभावी विधायक प्रशासन में काम करे तो गांधी केसपने का भारत साकार होगा, परंतु इस भ्रष्ट राजनीति के कारण यह संभव नहीं है ऐसा लगता है।

नारी शोषण की समस्या :-

नारी भारतीय समाज का एक महत्वपूर्ण अंग रही है। नारी के विविध रूपों की व्याख्या हो चुकी है, परंतु उसका दुर्गा की अपेक्षा अबला यही रूप अधिक मात्रा में उभर उठा है। युगों-युगों से पीड़ित, अत्याचार-अनाचार की शिकार एवं वासना तृप्ति का साधन बनकर जीवन व्यतीत करने वाली नारी बेबश, लाचार एवं अपमानित जिंदगी जी रही है। ''किसानों और मजदूरों के बाद भारतीय समाज का एक बृहद शोषित समूह भारतीय नारी अर्थ और अधिकार से वंचित रहने के कारण उसक कोई चारा नहीं। आर्थिक और सामाजिक स्तर पर उसका बराबर शोषण हो रहा है।''[28] यह कथन दलित नारी पर भी लागू होता है।

पाश्चात्य सभ्यता का आक्रमण, आर्थिकता का अभाव, अशिक्षा, धर्म का बुरा प्रभाव, रूढ़ि-परंपरा आदि के कारण नारी का जीवन समस्याओं से घिरा है। आशारानी व्होरा - ''नारी समस्याओं के मूल में अंधविश्वास, निरक्षरता और अज्ञान को मानती हैं।''[29] सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक समस्याओं में अटकी दलित नारी का विविध रूपों में शोषण हो रहा है। हिन्दी के उपन्यासकारों ने इस शोषित नारी के रूप पर गहराई से सोचा है। आलोच्य उपन्यासों में शोषित नारी का रूप, शोषण का आयाम, उसका पारिवारिक संबंध आदि के साथ शोषित नारी के रूप पर विचार करेंगे।

नारी

1) नारी का स्वरुप	**2) समस्या**		**3) शोषण के रुप**
	जीवन	**विवाह**	
- शोषित नारी			- जमींदारों द्वारा शोषण
- बलात्कारित नारी	- विधवा जीवन	- बालविवाह	- पुलिस द्वारा शोषण
- भोग्या नारी	- अवैध मातृत्व	- विधवा विवाह	- सरकारी अफसर द्वारा शोषण
- रखैल नारी	- अशिक्षा	- अनमेल विवाह	- धार्मिक व्यक्ति द्वारा शोषण
- वेश्या नारी	- आत्महत्या	- बहुविवाह	- रूढ़ि-प्रथा के कारण शोषण
- जागृत नारी	- अवैध संबंध	- दहेज	- परिसर द्वारा शोषण
- चेतित नारी	- परिवार	- परित्यक्त्या	- नारी द्वारा शोषण
- शिक्षित नारी			
- विद्रोही नारी			
- परित्यक्त्या नारी			

नारी के रुप	**पारिवारिक संबंध**	**टूटते-बिगड़ते संबंध**
- माँ	- पति-पत्नी संबंध	- पति-पत्नी संबंध
- बहिन	- भाई-बहन संबंध	- सास-बहू संबंध
- पत्नी	- सास-बहू संबंध	- भाई-बहन संबंध
- पढ़ी-लिखी नारी	- भाभी-ननद संबंध	- श्वसुर-बहू संबंध
- आदर्श नारी	- माँ-बेटा संबंध	
	- भाभी-देवर संबंध	

उपर्युक्त तालिका द्वारा भारतीय नारी तथा दलित नारी के विविध रूप स्पष्ट होते हैं, तथा उसका होने वाला शोषण, उससे व्यथित नारी जीवन दिखाई देता है। आलोच्य उपन्यासों में दलित नारी का किस प्रकार चित्रण हुआ है? उसपर हम यहाँ विचार करेंगे -

भगवती प्रसाद शुक्लजी ने 'खारे जल का गांव' में नारी के विविध रूप और शोषण के आयामों पर प्रकाश डाला है। चनकी, मटिया, पुनिया शोषित और बलात्कारित नारी के प्रतीक हैं। ठाकुर करन सिंह द्वारा चतुरी का कत्ल करना, स्नान करके आयी औरतों की ठाकुर द्वारा पिटाई करना, महुआ लेने आयी चनकी मटिया,पुनिया पर झूठा इल्जाम लगाकर पुलिसों के हाथ में सौंपना, किस्सू सिंह द्वारा चनकी की अस्मत लूटने का प्रयास करना आदि कई नारी शोषण के रूप दिखाई देते हैं। परंतु चनकी किस्सू सिंह के अन्याय का विरोध

करती है। विद्रोही नारी के दर्शन यहाँ होते हैं। विवाह के अवसर पर घी की मटकी गिरने से चसिया का विवाह नहीं होता। रूढ़ि के नाम पर नारी का शोषण हो रहा है। इसका यह प्रमाण है। ठाकुरों के अन्याय के कारण देवगांव और बेवहारी गांव की नारियाँ आत्महत्या करती हैं आदि नारी के रूप यहाँ दिखाई देते हैं।

जगदीश चंद्र जी ने रल्हन गांव के सामाजिक पृष्ठभूमि को स्पष्ट करते हुए नारी के विविध रूपों पर प्रकाश डाला है। वहाँ की नारी शोषित, विद्रोही एवं पीड़ित भी हैं। कानून से जमींदारी प्रथा समाप्त हो गई है। परंतु जमीदारों की ऐंठन आज भी बरकरार है। इस पर उपन्यासकारों ने व्यंग्य किया है। चौधरी इसी बात का प्रमाण है। ज्ञानो परिवार और रूढ़ि द्वारा शोषित नारी है। ज्ञानों चौधरी द्वारा पीटे गये जीतू का हाल पूँछने के लिये जाती है तब उसका भाई मंगू उसे फटकारते हुए कहता है - "तू यहाँ क्या कर रही है। तू घर पहुँच, तेरे टुकड़े करके जमीन में गाड़ दूँगा।" और लाठी का प्रहार किया। जब चौधरी हरदेव सिंह लच्छो की अस्मत लूटने का प्रयास करता है, तब लच्छो उसके पांव पकड़ती है। आदि शोषित नारी के रूप में उदाहरण हैं।

चौधरी द्वारा जीतू को पीटने पर ज्ञानो की माँ गाली देकर उसका विरोध करती है तथा ज्ञानों की पिटाई करने वाले भाई मंगू का विरोध करने वाली ताई निहाली कहती है -"कैसा बेदर्दी है, कसाई की तरह मारता है।" इस घटनाओं से स्पष्ट होता हैं यहाँ की नारी अब धीरे-धीरे नारी की रक्षा के लिए आगे बढ़ रही है।

उपन्यासकार ने नारी के खरीद-फरोख्त पर भी प्रकाश डाला है। नारी सिर्फ शोषण का रूप नहीं बल्कि खरीद-फरोख्तकी या बिकाऊ चीज है। नारी के इस अमानवीय रूप पर जगदीशचंद्र जी ने सोचा है। मिस्त्री संता सिंह पचास रूपये में नारी को खरीदना चाहता है। सरदार पूर्ण सिंह ने भी एक औरत को खरीद लिया था, परंतु उनके साथ सात दिन रहकर वह औरत सब सामान लेकर भाग गई। बाबक के लाला बनारसीदास नारी की खरीद-फरोख्त का धंधा करता है।"[30]

काली और ज्ञानो का विवाह पूर्व अवैध यौन संबंध होने से उसे कोख भर जाती है। परिणामत: ज्ञानों की माँ उसे संखिया दवा देकर मार डालती है। नारी का नारी द्वारा होने वाला शोषण यहाँ चित्रित किया है।

मदन दीक्षित ने 'मोरी की ईंट' में नारी के विविध रूपों को चित्रित किया है। हेल्थ ऑफीसर की कोठी पर काम करने वाली कामकाजी नारी मंगिया है। जिसका डाक्टर पाण्डे द्वारा अवैध यौन संबंध रखकर शारीरिक शोषण भी किया जाता है । पति झरगदिया जीवित होकर भी पति से दूर रहकर साहब की कोठी के पास रहना पड़ता है। पंचायत के द्वारा सुनाये गये फैसले के अनुसार पति झरगदिया को खाने-पीने के लिए आधी तरख्वाह देती है। इससे उनकी पतिनिष्ठा स्पष्ट होती है। परंतु परिस्थिति से शोषित होने के कारण वह कोठी में रहती है।

झरगदिया की मृत्यु के बाद कंगन फोड़कर वैधव्य को स्वीकार करती है, परंतु कोठी में आकर चूड़िया और आभूषण पहनती है। परिवर्तित नारी के दर्शन यहाँ होते हैं। चुंगी के हेल्थ डिपार्टमेंट के लोग और जमादार हीरालाल खूबसूरत दिखाई देने वाली मेहतरानियों का शोषण करते हैं। ऐसे युवतियों को अफसरों, बाबुओं के पास भेजकर अपना कार्य पूरा कर लेता है। मेहतर जाति की रम्पिया, रधिया और मंगिया पढ़ी-लिखी नारी है। और ये तीनों अन्याय के खिलाफ संघर्ष करने के लिए 'घघरिया पल्टन' बनाती हैं। उसके माध्यम से औरतों पर हो रहे अत्याचार के खिलाफ आवाज उठाकर उन्हें न्याय दिलवाने का कार्य करती है। वे चेतित और विद्रोही नारी के प्रतीक हैं।

रामधारी सिंह दिवाकर ने 'आग-पानी आकाश' में रखैल नारी, पीड़ित नारी, शिक्षित नारी आदि जैसे विविध रूपों पर प्रकाश डाला है। भागवतबाबू की शिक्षिका पत्नी बी.एस.डिग्री कॉलेज में ग्रंथपाल बनकर कार्य करती है। रामसजीवन की विधवा बहिन बेचनी टेलरिंग का कोर्स करती है। सिलाई की दुकान शुरू करके अपनी जीविका चलाती है। भूपति बाबू ने बब्बन धोबी की बहिन झुनकी को रखैल के रूप में निजी सम्पत्ति के तौर पर रखा था। दुसाध टोली की सुभगिया बलात्कार की शिकार नारी है। सोलकन्ह टोले की मल्लाहिन लड़कियों को फंसाकर ले जाकर भागवत बाबू ने सरकारी अफसरों के पास दो दिन रखा। और अपना काम पूरा करवाते हैं। आदि विविध नारी के रूप यहाँ दिखाई देते हैं।

निष्कर्ष :- यहाँ स्पष्ट है नारी समाजव्यवस्था का एक प्रधान अंग होने के साथ-साथ एक शोषण का भी रूप रही है। धार्मिक व्यक्ति धर्म के नाम पर, जमींदार, महाजन, साहूकार धन के बल पर, सरकारी अफसर, पुलिस पद के आधार पर तथा परिवार वाले लोग रूढ़ि-परंपरा के नाम पर नारी का शोषण कर रहे हैं। आज नारी शिक्षित होकर अन्याय का विरोध कर रही है।

आलोच्य उपन्यासकारों ने ऐसे नारियों का चित्रण भी किया है। जमींदारों को फटकारने वाली 'खारे जल का गांव' की चनकी, 'धरती धन न अपना' की ज्ञानो, 'मोरी की ईंट' की मंगिया इसके उदाहरण हैं। विधवा पन का दु:ख भूलकर अपने पांव पर खड़ी रहने वाली 'मोरी की ईंट' की मंगिया नारियों के लिए आदर्श है। 'घघरिया पल्टन' की स्थापना नारी संगठन का और नारी एकता का प्रतीक रहा है। यहाँ लगता है अब नारी परंपरागत रूप में शोषित न रहकर विद्रोही, चेतित, शिक्षित, कामकाज करनेवाली, आत्मनिर्भर नारी दिखाई देती है।

जातीय भेदाभेद की समस्या :-

भारतीय समाज व्यवस्था में धर्म के साथ जाति एवं गोत्र का महत्व रहा है। ग्रामीण लोग अपनी जाति व्यवस्था को सुरक्षित रखना चाहते हैं। परिणामत: जातीय भेदाभेद की समस्या का निर्माण हुआ है। आज देश में जातीयता एवं साम्प्रदायिकता की दग्धता फैल रही है। ग्रामीण जीवन में भी इसके दर्शन होते हैं।

डॉ. देवेश ठाकुर के मतानुसार - ''एक ओर राष्ट्रीयता के भावना से प्रेरित भारतीय समाज एक स्वर में अंग्रेजी शासन के विरुद्ध उठ खड़ा हुआ था और दूसरी ओर स्वयं उसमें नगर ही नहीं ग्राम्य और आंचलिक स्तर पर भी जातिवाद का विषबीज विकास पा रहा था जिससे व्यक्ति-व्यक्ति के बीच मतभेद की खाईं गहरी हो रहीं थी और व्यक्ति समाज जातिगत आधार पर अलग-अलग समूहों में विभाजित और विछन्न होकर परस्पर द्वेष, ईर्ष्या और शत्रुता के भाव को बढ़ाता हुआ राष्ट्रीय शक्ति, एकता और उदात्त मानवीयता के आदर्शों को धूमिल कर रहा था।''[31] यहाँ यह कथन यथार्थ लगता है जिससे जातीयता का स्वरूप स्पष्ट होता है।

भारतीय समाज व्यवस्था का प्रधान अंग 'जाति' है। प्राचीन काल से लेकर आज तक भारतीय लोग अपनी जातिव्यवस्था और धर्म की रक्षा कर रहे हैं। जी-जान से उसका पालन हो रहा है। जाति एक बंद कोटिवाला स्थिति समूह है। व्यवस्था के रूप में जाति का संबंध प्रस्थापितों एवं अन्य जातियों के बीच में विद्यमान है। ''अधिकतर विद्वानों में जाति को एक संगठन के रूप में माना है, न कि मूल्यों एवं प्रवृत्तियों के समूह के रूप में।''[32] जाति, वर्ण, उपजाति तथा जनजाति आदि शब्दों के बारे में समाजशास्त्रियों ने अपने-अपने विचार रखे हैं तथा अपना दृष्टिकोण भी स्पष्ट किया हैं। यह निश्चित है कि जाति के कारण सामूहिक भावना पैदा होती है परंतु उसका आज घिनौना रूप साम्प्रदायिकता के रूप में उभर रहा है। आज यह एक समस्या बनी है। हर एक जाति में अपने गोत्र रहे है, अपनी उपजातियाँ रही है। अपनी जाति, गोत्र को श्रेष्ठ मानने की प्रवृत्ति जातीय भेदाभेद को जन्म देती है। डॉ. ज्योत्स्ना शर्मा के मतानुसार - ''लोग जाति-पाँति का ध्यान अभी तक इतना रखते हैं कि गरीब से गरीब व्यक्ति भी इसके पालन में अपने आप पर गर्व करता है।''[33] यह कथन दलितों के बारे में भी यथार्थ लगता है। दलित लोग अपनी जाति व्यवस्था का कड़ाई से पालन करते हैं, तो दूसरी ओर सवर्ण लोग जाति के आधार पर दलितों को अछूत, उपेक्षित मानते हैं। परिणामत: दलित और सवर्णों में संघर्ष शुरू होता है। जब तक धार्मिक संकीर्णताओं की बेड़ी नहीं टूटती, जब तक मनुष्य को मनुष्य के रूप में नहीं देखा जाता तब तक यह जाति व्यवस्था और जातीय भेदाभेद की समस्या बरकरार रहेगी। जाति की दीवार तोड़ने के लिए समाज सुधार आन्दोलन की आवश्यकता है। हिन्दी साहित्य के प्रगतिशील विचारों के वाहक साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं में इसी विचार का प्रसार और प्रचार किया हैं। फुले, शाहू, आम्बेडकर जैसे सुधारकों ने इसी दृष्टि से कार्य किया। आलोच्य उपन्यासों में भेदाभेद की समस्यापर विस्तृत मात्रा में चिंतन किया है उस पर हम यहाँ सोचेंगे -

'खारे जल का गांव' उपन्यास में डॉ.भगवती प्रसाद शुक्ल जी ने जातीय भेदाभेद की समस्या पर विस्तार से विचार किया है। गोदावल मेले के समय भगवान शिव के मंदिर में नीची जाति के औरतों को दर्शन के लिये जाने से मना करके बड़े घर की बहू, बेटी और औरतों को अंदर प्रवेश देने पर सुग्रीव पुजारी देवसेवक राम

से कहता है कि ''पंडित महराज, क्या आप यह समझते हैं कि जो 'इहाँ' खड़ी हैं, वे किसी की 'बहुरिया-बिटिया' नहीं है? ई बड़कवा-छोटकवा यहाँ नही चलेगा, ई भगवान का दरबार है।''[34] यहाँ स्पष्ट होता है कि मंदिर में भगवान के दर्शन के लिये भी नीची जाति के औरतों और लोगों के साथ भेदभाव किया जाता था। उन्हें भगवान के पूजा-अर्चना और दर्शन के अधिकार से दूर रखा जाता था। सुग्रीव जोर देकर औरतों को मंदिर में जाने के लिये कहता है तो औरतें मंदिर में प्रवेश करने लगती हैं। जिसपर देवसेवकराम पंडित बड़बड़ाते हुए कहते हैं कि ''नीचों के मुँह कौन लगे, जइसा करेंगे, वैसा भरेंगे।''[35] औरतों के मंदिर प्रवेश करने से पूर्व चनकी सभी से कहती है कि अभी कोई मंदिर में नहीं जाएगा। पहले सभी लोग भोलेबाबा के गीत गायेंगे। सभी औरतें जुड़-बटुर जाती हैं और भोले बाबा के गीत गाती हैं। जिस पर पुजारी को क्रोध आ जाता है। वे स्वयं तथा पंडित गैबीदीन दोनों मिलकर औरतों के ऊपर तड़ातड़ लाठियाँ बरसाने लगते हैं और कहते हैं - ''ई चमारिन मंदिर माँ घुसि हैं। ई भोलाबाबा के गीत गावैंगी का समझ लिहिन कि धरम चला गया....।'' यहाँ स्पष्ट होता है कि नीच जाति के लोगों को मंदिर में प्रवेश करने, भगवान का दर्शन करने, भगवान के गीत गाने का अधिकार नहीं था। इसी बात से उस गांव के सवर्णों की मानसिकता स्पष्ट होती है तथा सामाजिक और जातीय भेदाभेद के दर्शन होते हैं। इस बात की शिकायत पुलिस स्टेशन में किये जाने पर पुलिस जमादार आते हैं और वे भी सुग्रीव को पकड़कर फटकारते हुए कहते हैं - ''क्यों रे खटीक के बच्चे, बलवा करते हो, ऐसा मारूँगा कि सिट्टी-पिट्टी गुम हो जाएगी। नेतागिरी झाडते हो।'' यहाँ पर सरकारी अफसर द्वारा भी निम्न स्तर के लोगों को बिना किसी गलती के डांटा-फटकारा जाता है और सवर्णों की गल्ती होने पर भी कुछ नहीं कहा जाता है। इसमें भी जातीय भेदाभेद दिखाई देता है।

अरविन्द चमरहटी के लोगों को अपने हक्क की बात को समझाने, उनकी सुप्त अस्मिता को जगाने, उनमें स्वाभिमान की रक्षा का साहस भरने, उनके साक्षर बनाने के लिये प्रौढ़ शिक्षा केंद्र खोलकर लोगों को स्वयं पढ़ाने का कार्य करता है। जिस पर भी गांव के सवर्णों द्वारा उसको जाति-बाहर करने का निर्णय दिया जाता है। जाति पंचायत का आयोजन करके यह फैसला किया जाता है - ''अरविन्द चमारन केर हाथ केर पानी पियत हय । खटिकन के हेन रोटी खात हय। कुर्मी के हेन भात खात हय-ये से जात से बाहर कइ दीन गा। अगर देवसेवक राम ओही अलग न करैं, तो उनका हुक्का पानी बंद कीन्ह गा।'' यहाँ पर ब्राह्मण लोगों के द्वारा जातीय भेदाभेद के कारण तथा छुआछूत की बात लेकर विरोध किया जाता है वहीं पर चमारों द्वारा भी इसका विरोध किया जाता है। वे लोग भी कहते हैं - ''सब बड़े आदमियन के चोचले हैं। बैठे-ठाले का काम है, पढ़-लिखकर हम का करब?'' यहाँ स्पष्ट होता है कि सवर्ण लोग दलितों से भेदभाव करते हैं तथा दलित लोग सवर्णों से । यहाँ आपसी भाईचारा, विश्वास का अभाव दिखाई देता है। इन सबका मूल कारण जातीय भेदाभेद ही दिखाई देता है ऐसा लगता है।

इस गांव में जातीयता के भेदभाव के बारे में उपन्यासकार ने दूसरे ढंग से भी स्पष्ट करने का प्रयास किया है जिसमें इस गांव के नाले, तालाब, पेड़ तथा गांव के चारों ओर पसरी हुई सड़क भी भेदाभेद करते हैं। सड़क के बाहर-बाहर नीची जाति के लोग तथा भीतर ऊँची जाति के लोग रहते हैं। सड़क और तालाब तथा नाले के उस पार चमार, डोम, बसुहार, कोल, बनिया, ठाकुर, कायस्थ रहते हैं। यहाँ स्पष्ट होता है कि गांव की रचना करते समय ही जातीय भेदाभेद के साथ की गई है। अत: इस गांव में भेदभाव की समस्या को स्पष्ट करने का यह नया तरीका उपन्यासकार ने अपनाया है। इससे स्पष्ट है कि ग्रामव्यवस्था में भेदाभेद रहा है। इसमें जातीय पंचायत की भूमिका महत्वपूर्ण रही है। किसी भी जातीय घटना पर पंचायत निर्णय देती है।

'धरती धन न अपना' उपन्यास में जगदीशचंद्रजी ने जातीय भेदाभेद की समस्या के बारे में विस्तार से सोचा है। उन्होंने इस समस्या के बारे में पंजाब प्रान्त के रल्हन गांव का चित्रण प्रस्तुत किया है। इस गांव के पंडित संतराम हरिजनों को देखकर दूर से ही दुर-दुर करना शुरू कर देते हैं। वे चमादड़ी के लोगों को मंदिर में प्रवेश नहीं करने देते हैं तथा मंदिर के सामनेवाले कुएं की जगत पर भी फटकने नहीं देते। वे इन लोगों के स्पर्श से तथा चमारों की परछाईं से भी परहेज करते हैं। गांव का दुकानदार भी हरिजनों के साथ जातीय भेदाभेद बरतते दिखाई देता है। एक बार छज्जूशाह ने काली को सिगरेट पीने के लिये दिया तब काली कहता है कि मैं सिगरेट पीना कम ही पसन्द करता हूँ, मुझे तो हुक्का यदि है तो दीजिए, मैं हुक्का ही पीऊँगा। इस बात पर छज्जूशाह कहता है कि - ''बात तो तुम्हारी ठीक हैं। मैंने अपने हुक्के के अलावा दो हुक्के और भी रखे हुए थे, एक जाटों के लिए और दूसरा चमारों के लिए। कुछ दिन हुए एक चमार ने पीने के लिए हुक्का मांगा, मैंने दे दिया और वह भला मानस जाते समें आँख बचा हुक्का लेते गया।''[36] इस प्रकार गांव के दुकानदान भी जातीय भेदाभेद रखते दिखाई देते हैं।

काली घर बनवाने के लिए लगने वाली ईंट खरीदने भट्‌टी पर गया तब वहाँ पर उसके साथ परजापत दीनू भी गया। भट्‌टी का मुंशी काली को देखकर परजापत से कहता है कि - ''यह आदमी शक्ल से तो चमार दिखाई देता है लेकिन पहनावा कुछ और ही कहता है।''[37] यहाँ स्पष्ट होता है उस गांव के लोग वेशभूषा से भी जाति की पहचान रखते हैं तथा शक्ल-सूरत से भी जाति का अन्दाज करते है। इससे गांव के लोगों में जातीय भेदाभेद कितना गहरा असर कर चुका है इसके भी दर्शन होते हैं। काली का मकान बनाने के लिए राजगीर संतासिंह जब मजदूरी तय कर रहा था, उसी समय यह भी स्पष्ट करता है कि - ''हम जहाँ राज का काम करते हैं, दोपहर की रोटी और शाम की चाय वही खाते-पीते हैं। तेरे घर में रोटी तो खा नहीं सकता, इसलिये तुम रोटी-चाय के नकद पैसे अलग दे देना।'' काम पर आने के बाद जब मिस्त्री संतासिंह को जोर की प्यास लगती है तब काली उससे कहता है कि - ''नंद सिंह तो तेरा सिखभाई है उसके घर से पानी ला दूँ।'' इस पर

मिस्त्री काली से कहता है कि - ''वह तो रमदसिया सिख है, उसका मेरा क्या रिश्ता ? सिख बन जाने का मतलब यह तो नहीं कि वह चमार नहीं रहा, धर्म बदलने से जात तो नहीं बदल जाती।''[38] यहाँ पर स्पष्ट होता है कि इस गांव में जातीय भेदाभेद सभी स्तर की जातियों में दिखाई देता हैं, जो गांव के विकास में सबसे बड़ी रूकावट मालूम होती है। चमादड़ी के सबसे बुजुर्ग व्यक्ति ताया बसन्ता भी नंदसिंह से कहता है कि - ''तेरे सिर पर अभी सींग नहीं उगे हैं। तू कुछ भी बन जा लेकिन रहेगा चमार का चमार ही। जात कर्म से नहीं जन्म से बनती है। अगर चमार कहलवाना पसन्द नहीं था तो किसी और माँ के पेट से जन्म लिया होता।''[39] इस प्रकार स्पष्ट है कि सभी लोगों में जातीय भेदाभेद की समस्या घर कर चुकी है। उससे शहर आ पाना उन सभी के लिए संभव नहीं है, क्योंकि वे इस विषय में मानसिक रूप से कमजोर / जर्जर हो चुके हैं।

जगदीश चंद्रजी ने 'मोरी की ईंट' उपन्यास में भी जातीय भेदाभेद के बारे में विचार किया है। उपन्यासकार ने प्रस्ताविक में ही 'मेहतरसंघ' की स्थापना और उससे चुंगी बोर्ड पर पड़े प्रभाव तथा मिली विजय आदि का चित्रण किया है। जब प्यास बुझाने के लिए मटके से पानी लेकर पीता है तब उसकी ताई ने मटके को पटककर फोड़ दिया और जोर देकर कहा कि - ''यह ब्राह्मण का घर है, इसमें यह भ्रष्टम-भ्रष्ट नहीं चलेगा। अपनी बाहर की कोठरी में जैसे चाहो नंगे नाचो।''[40] इस प्रकार स्पष्ट होता है कि जातीय भेदाभेद और छुआछूत का कितना प्रभाव समाज के सभी वर्गों तथा सभी व्यक्तियों पर हावी था। मंगिया को डाक्टर पांडे से जब अवैध संतान सोहन पैदा होता है तब उसकी पढ़ाई के बारे में डॉ.पांडे कहते हैं कि - ''यहाँ तो कोई सोहन को किसी स्कूल के क्लास में घुसने नहीं देगा और क्लास से बाहर बैठकर उसकी कोई-पढ़ाई-लिखाई होने से रही। अत: ईसापुर के ईसाईयों के मिशन स्कूल में सोहन को दाखला मिल सकता है। मिडिल तक पढ़ाई-लिखाई का और रहने-सहने का सारा खर्च मिशन उठाएगा।'' जब डाक्टर तथा उनकी पत्नी द्वारा मेहतरानी मंगिया को मान-सम्मान जादा मिलता है तब मंगिया डाक्टरनी से कहती है कि - ''आप एक मेहतरानी को इतना ऊँचा-चढ़ाकर बैठा देंगी तो लोग क्या कहेंगे?'' इससे स्पष्ट होता है कि निम्न जाति के लोग मानसिक रूप से कमजोर हो चुके थे। उनमें ऊपर उठने की भावना ही नहीं थी। यदि उन्हें इस स्थिति से कोई ऊपर उठाने का प्रयत्न करता है तब भी वह समाज के लोगों का ख्याल करके अपनी यथास्थिति बनाये रखने के बारे में सोचते हैं। यहाँ पर दलितों की मानसिकता के परिवर्तन की आवश्यकता दिखाई देती है।

जगदीश चंद्रजी ने उपन्यास में दलितों, अशिक्षितों के अलावा पढ़े लिखे लोगों में भी जातीय भेदाभेद की समस्या को स्पष्ट किया है जैसे सैम्युअल का लड़का जैकब कड़ी मेहनत और लगन के साथ पढ़ाई करता है परिणामस्वरूप वह इम्तिहान से फर्स्ट डिवीजन में पास होता है। तब उसके भूगोल के अध्यापक विन्स्टन दिलीपसिंह अपने लड़के को डांटते हुए कहते हैं - ''वह भंगी का बेटा तो फर्स्ट डिवीजन में पास हुआ है और तुम

सुसरे, निकम्मे जमाने भर के राजपूतों के बेटे होकर भी थर्ड डिवीजन में पास हुए हो।'' यहाँ पर पढ़े-लिखे लोगों की मनोवृत्ति कितनी सोचनीय होती है इसका परिचय मिलता है। उपन्यास में धर्मपरिवर्तन के बारे में भी एड्गर अपनी पत्नी से जातीय भेदाभेद की बात बताता है। एड्गर कहता है कि - ''देशी ईसाईयों में ज्यादातर लोग नीची जाति के हैं और उनकी समाज में कोई हैसियत भी नहीं है।'' इस तरह यहाँ पर भी भेदभाव की नीति दिखाई देती है। यहाँ स्पष्ट होता है कि सभी धर्मों-सम्प्रदायों में यह भेदाभेद स्थित है और लोग इसका पालन कड़ाई से करते हैं। जिसे उपन्यासकार ने स्पष्ट किया है।

'एकलव्य' उपन्यास में भी महाभारत कालीन जाति के भेदाभेद को चंद्रमोहन प्रधान जी ने स्पष्ट किया है। उस जमाने में भी जातीय भेदाभेद के कारण दलितों, वनवासियों, निषादों को शिक्षा व्यवस्था से दूर रखा जाता था। एकलव्य जब आचार्य द्रोण के पास धनुर्विद्या सीखने के लिए जाता है तब आचार्य कहते हैं कि यह शिक्षा तो राजवर्गों के लिए ही सुरक्षित रखी गई है, तुम्हें इसकी क्या आवश्यकता पड़ गई है ? तुम तो हीन निषादकुल में जन्में हो। इस पर एकलव्य आचार्य से प्रतिप्रश्न पूँछता है कि आप तो ब्राह्मण हैं। फिर भी क्षत्रियोचित शिक्षा क्यों प्राप्त किया ? इस अनपेक्षित प्रश्न से आचार्य को क्रोध आ जाता है और वे कहते हैं - ''ब्राह्मण सर्वश्रेष्ठ वर्ग है, वह कुछ भी कर सकता है, उसे क्षम्य है। उसे क्षत्रियों को शिक्षा भी देनी होती है। क्षत्रिय की सीमा उससे संकुचित है, और वैश्य की तो और भी। शूद्र अधिकार हीन है। अत: तुम्हारा आक्षेप अनुचित ही है।'' यहाँ पर स्पष्ट है कि उस समय समाज में फैले जातीय भेदाभेद के कारण शूद्रों को कोई भी अधिकार प्राप्त नहीं था। उनका सिर्फ सेवाकर्म के कार्य के लिये ही उपयोग किया जाता था और उन्हें सभी सुविधाओं से दूर रखा जाता था। शिक्षा व्यवस्था में जातीयता के कारण दलित उपेक्षित रहा है।

'आग-पानी आकशा' उपन्यास में भी जातीय भेदाभेद की समस्या को स्पष्ट करने का रामधारी सिंह दिवाकर जी ने प्रयास किया है। आधुनिक युग के इस उपन्यास में उन्होंने जातीय भेदाभेद की समस्याओं को दो प्रकार से स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है। इसमें उन्होंने सवर्णों के द्वारा दलितों का तथा पूँजीपति और अधिकारी बने दलितों के द्वारा भी दलितो का और सवर्ण कर्मचारियों के साथ जातीय भेदाभेद की समस्या को स्पष्ट किया है। इसमें जमींदार बाबू भूपति नारायण सिंह और गांव के पंडित शोभाकांत झा द्वारा दलितों के साथ भेदभाव किया गया दिखाई देता है,तो नये पूँजीपति बने भागवत बाबू गांव के पसियान टोला, सोलकन्ह टोला तथा धोबियान टोला के लोगों के साथ भेदभाव करते दिखाई देता है। तथा सरकारी नोकरी प्राप्त किये आलोककुमार तथा कस्बे के एस.पी.साहब हरिजन जाति के होते हुए भी हरिजनों के बच्चों के साथ भेदभाव करते हैं। आलोककुमार के लड़के के साथ रामसजीवन जब उसके घर जाता है तथा लड़के द्वारा माँ-बाप से यह कहकर परिचय कराया जाता है कि 'यह भी अपनी जाति का ही है।' तब उसके परिवार वाले उसके साथ भेदभाव बरतते

हैं। वे सीधी मुँह बात तकनहीं करते हैं। यहाँ पर दलितों द्वारा दलितों केसाथ भेदाभेद की समस्या दिखाई देती है।

वित्त सचिव युगेश्वर भी हरिजनों के साथ भेदाभाव करता है तथा सवर्णों के साथ प्रतिस्पर्धा करता है और बदले की भावना उसकी मानसिकता बन जाती है। कार्यालय में सवर्णों को डांटना-फटकारना उसकी आदत हो जाती है। इसका उदाहरण चपरासी झा है। युगेश्वर स्वजाति के लोगों के साथ भी सहानुभूति नहीं रखते हैं। रामसजीवन जब उनसे हरिजनों की समस्या के बारे में हल निकालने का अनुरोध करता है तब वे उसके ऊपर झल्लाते हुए बिगड़ पड़े और कहने लगे - ''हरिजन ! .... हरिजन ! ये साले हरिजन कभी क्या सुधरेंगे ? मैंने हरिजनों का ठेका नहीं ले रखा है रामसजीवन । हरिजनों की बात मुझसे मत करो।''[41] इस प्रकार स्पष्ट होता है कि हरिजन नेता भी हरिजनों के साथ जातीय भेदाभेद का बर्ताव करते हुए उनकी समस्याओं को सुलझाने का प्रयास नहीं करता है। जो कि इस आधुनिक काल की परिवर्तित मानसिकता का परिणाम है। आज के दलित नेता सवर्णों के साथ स्पर्धा कर रहा है तथा स्वजाति के लोगों की समस्याओं की तरफ उपेक्षा की दृष्टि रख रहा है। इसे उपन्यासकार ने स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है।

यहाँ स्पष्ट है आलोच्य उपन्यासों में उपन्यासकारों ने जातीय भेदाभेद की समस्या पर गहराई से सोचा है। ग्रामव्यवस्था से लेकर समाजव्यवस्था और रचना तक इसका प्रभाव है। शिक्षा व्यवस्था में जातीयता होने के कारण दलित आज भी शिक्षा से वंचित रहा है। महाभारत से लेकर आधुनिक भारत तक यह समस्या ज्यों-की-त्यों रही है ऐसा लगता है। ग्रामीण और शहरी दलित इससे प्रभावित है तो दूसरी ओर 'आग-पानी आकाश' में दलितों द्वारा दलितों का शोषण एक नयी समस्या चित्रित की है। ऐसा ही चलता रहेगा तो सामाजिक एकता का सपना, सपना ही रहेगा ऐसा लगता है। इसके लिये कानून की अपेक्षा मानसिक बदलाव होना जरूरी है।

भ्रष्टाचार की समस्या :-

आजादी के पश्चात भारत सरकार देश के विकास के लिये कार्य कर रही है। एक ओर विकास की गंगा बह रही है तो दूसरी ओर नयी-नयी समस्याओं की बदबू भी आ रही है। ये समस्याएं भारतीय जनता का शोषण कर रही हैं। उनमें एक समस्या भ्रष्टाचार की समस्या है। इसका निर्माण किसी धार्मिक मत या अंधश्रद्धा का परिणाम नहीं बल्कि वर्तमान व्यवस्था एवं नीति के कारण इस समस्या का जन्म हुआ। शिक्षित, अशिक्षित, नागरी, ग्रामीण सभी लोग इस समस्या से पीड़ित हैं। ''प्रजातंत्र में भ्रष्टाचार बढ़ता जा रहा है। भ्रष्टाचार का अर्थ अपने पद अथवा शक्ति के दबाव में अनुचित कार्य करवाना, सत्ता एवं सामर्थ्य का दुरूपयोग करवाना।''[42] भारत देश में भ्रष्टाचार की जड़े गहरी हैं। सरकारी अफसर, राजनीतिक नेता लोग, धार्मिक लोग, इस समस्या को बढ़ावा दे रहे हैं। धन कमाना, श्रम के बिना सफलता पाना, अवैध धंधों की रक्षा करना, इसी कारण भ्रष्टाचार

बढ़ रहा है। "आज सर्वत्र नौकरशाही, भ्रष्टाचार, दांवपेंच की राजनीति और नैतिक मूल्यों का पतन हो रहा है। जिसके जिम्मेदार है, हमारे नेतागण।"[43] तो बाबूराव गुप्त ने - "शासनव्यवस्था, राजनीतिक नेताओं और सरकार के कारिंदों को भ्रष्टाचार का जिम्मेदार माना है।"[44] यहाँ स्पष्ट है भ्रष्टाचार करने वाले जमींदार, महाजन, सरकारी अफसर, राजनीतिक नेता लोग हैं, सामान्य जनता नहीं। परंतु भ्रष्टाचार से पीड़ित सामान्य व्यक्ति ही रहा है। भ्रष्टाचार को सरल शब्दों में 'रिश्वत' कहा जाता है। जे. नाय ने कहा है - "भ्रष्टाचार निजी लाभों के लिए सार्वजनिक पद का दुरूपयोग दर्शाता है।"[45] हिन्दी उपन्यासकारों ने भ्रष्टाचार की भयावहता और उससे शोषित लोगों की व्यथा-कथा उपन्यासों में चित्रित की है। आलोच्य उपन्यास इसके प्रमाण हैं। इन उपन्यासों में भ्रष्टाचार की समस्या पर किस प्रकार प्रकाश डाला है, उस पर हम सोचेंगे -

आजादी के बाद बनी समस्याओं में एक समस्या भ्रष्टाचार की है। राजनीतिक नेता, समाज सुधारकों ने इस पर सोचा है तथा साहित्यकारों ने इसे वाणी दी है। भ्रष्ट आचरण, अनैतिक कर्म, पाप की प्रवृत्ति भ्रष्टाचार के मूल में है। विकास के मार्ग में भ्रष्टाचार रूकावट है। आज भ्रष्टाचार की शुरूआत सरकारी दफ्तरों से होती हैं ऐसा कहा जाता है। साहित्य में भी इसके दर्शन होते हैं। आलोच्य उपन्यासों में भी इस पर प्रकाश डाला है। शिक्षित, अशिक्षित, नागरी, देहाती, सवर्ण, दलित सभी इस समस्या से पीड़ित हैं। जमींदार, महाजन, साहूकार, सरकारीलोग, अफसर, दरोगा, ठाकुर, राजनीतिक नेता लोग इसमें अटके हैं। सामान्य, गरीब, ग्रामवासी, दलित, पिछड़ी-जनजाति में भ्रष्टाचार दिखाई नहीं देता मगर भ्रष्टाचार से उनका शोषण रहा है। अत: यह एक समस्या बनी है।

डॉ. भगवती प्रसाद शुक्ल के 'खारे जल का गांव' में पुलिस द्वारा भ्रष्टाचार करना चित्रित किया है। अरविन्द द्वारा मजदूरों का जुलूस निकालना, अपनी मांगे पेश करना, जमींदार पुलिस की मिली भगत होना, अंत में जुलूस पर लाठियाँ चलाना, फायर करना आदि घटनाएं भ्रष्टाचार को दर्शाती है। इसके वर्णन देखिए - किस्सूसिंह द्वारा चनकी, मटिया और पुनिया के साथ किये गये अत्याचार के मामले में जब पुलिस आती है तब वह मामले को रफा-दफा करने के लिए सौ रूपये की मांग करती है और दरोगा कहता है कि यदि रूपया नहीं दोगे तो - "चोरी के मामले में तीनों लड़कियों को बांध ले जाएंगे।" पुलिस जमादार ने डराकर चमरहटी से सौ रूपया लिया। रघ्घू पंडित अरविन्द से कहता है - "तुम सब खेल बिगाड़ रहे हो, कुछ चाय-पान का जुगाड़ बैठ जाता, तुम तो निरे गावदी हे।, बयान बदल दो।"[46] सुग्रीव और नरइना को ठाकुर करन सिंह, रमधनिया बनिया और महेश्वरी सिंह द्वारा मारने पर पंचायत में मामला दर्ज करते समय मुंशीजी कहते है - "कुछ खान-खरच का नाही।" रघ्घू पंडित ने दस रूपये का नोट थमा दिया। अरविन्द, सुग्रीव द्वारा मुकदमा दर्ज करने पर क्षोभ व्यक्त करते हुए कहता है -"मुकदमें में क्या होगा ? मुंशी सदाबिहारी और रघ्घू पंडित दोनों ओर से पैसे खायेंगे। फिर

टांय-टांय फिस्स। वे सब एक ही थैली के चट्टे-बट्टे है।''47 इस कथन से यहाँ स्पष्ट होता है कि न्याय की मांग करने पर भी सही न्याय मिलेगा ? कैसे मिलेगा? यह कहना असंभव है। दोनों ओर से पैसे लेकर न्याय कहाँ मिलेगा? कैसे मिलेगा ? यही व्यथा अरविन्द स्पष्ट करता है। भ्रष्टाचार का एक अनोखा रूप यहाँ रहा है। गांव में बीमारी के निराकरण हेतु टीका लगाने का भी पैसा लिया जाता है और टीके न लगवाने वालों से भी पैसा लिया जाता है। भ्रष्टाचार के सहारे फाइल बंद होती है तो सार्वजनिक कार्य हेतु ग्राम विकास की योजना में भी भ्रष्टाचार दिखाई देता है जिसका असर सामान्य व्यक्ति पर होता है। यहाँ भी भ्रष्टाचार के दर्शन होते हैं।

केसरवानी परिषद कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय की स्थापना के बाद सरकारी अनुदान में से आधा रूपया मास्टरों को वेतन देते थे और पूरा लिखवाया जाता था तथा अधिव्याख्याता से उनकी नियुक्ति के समय रूपये लिया जाता है तथा उन्हें वेतन भी समय पर नहीं दिया जाता। प्राचार्य गुप्ता के शब्दों में - ''हम कब तक गरीब अध्यापकों का पेट काटकर इन सेठों का पेट भरते रहेंगे ।''48 शिक्षाव्यवस्था भी भ्रष्टाचार से मुक्त नहीं है ऐसा लगता है प्राचार्य गुप्ता का कथनइसका प्रमाण है, शिक्षा, ज्ञानदान जैसे पवित्र क्षेत्रों में भी भ्रष्टाचार प्रवेश किया है उस पर सही अर्थ में उपन्यासकार ने प्रकाश डाला है। दूसरी ओर सरकारी विभाग के लोग भी भ्रष्टाचार से व्याप्त है। सरकारी विभाग में रिश्वत लेकर उसको अधिकारियों की संख्या के अनुपात में बांटकर लिया जाता है। इसको स्पष्ट करते हुए लिखा है - ''बेवहारी गांव की उत्तरी सीमा पर जंगल के नाके में फॉरेस्ट विभाग के अधिकारी 'बैरियर' को सोने का अंडा देने वाली चिड़िया मानते हैं। यहाँ पर नियुक्त फॉरेस्ट गार्ड को कम से कम बीस रूपये की रिश्वत देनी पड़ती है। जिसमें से आधा हिस्सा रेंजर तथा डी.एफ.ओ. को भी दिया जाता है और कुछ भाग स्थानीय नेताओं को भी देना पड़ता है।''49 इससे स्पष्ट है कि भ्रष्टाचार कोई एक ही व्यक्ति द्वारा नहीं किया जाता बल्कि सभी लोगों की आपसी मिली भगत होती है। यहाँ स्पष्ट है भगवती प्रसाद जी ने शिक्षा, सरकारी दफ्तर, महाविद्यालय व्यवस्थापन, सरकारी विकास योजना,पुलिस, विधि व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार पर सोचा है। जब तक भ्रष्टाचार कम नहीं होगा, तब तक देश का विकास संभव नहीं, यही संदेश दिया है।

'धरती धन न अपना' में जगदीशचंद्रजी ने इस समस्या की तरफ ध्यान खींचा है। उन्होंने जातीय भेदाभेद और धर्मपरिवर्तन की समस्या का विस्तृत रूप से चित्रण किया है। साथ-ही-साथ भ्रष्टाचार की समस्या के बारे में चित्रण किया है। पटवारी द्वारा जमीन नापते समय फीस लेना, डाक द्वारा मनीऑर्डर देते समय वापस महसूलके नाम से पैसा वसूलना, काली का नया घर बनाते समय बुनियाद खोदने के मामले को लेकर निक्कू से झगड़ा होता है तब धड्डम चौधरी पटवारी को बुलाने की सलाह देते हुए कहता है कि - ''वैसे तो इस काम की कोई फीस नहीं होती, लेकिन अगर फीस न दो तो पटवारी को कभी जरीब नहीं मिलती तो कभी गांव का नक्शा खो जाताहै।''50 इस प्रकार सरकारी अधिकारी गांव के लोगों से पैसे वसूल करते हैं। काली का जब शहर से मनी

ऑर्डर आता है तो मुंशीजी द्वारा पैसा कम दिये जाने पर काली कहता है - "मुंशीजी मनीऑर्डर तो अस्सी रूपये का है, आप मुझे सिर्फ सवाउनासी रूपये दे रहे हैं।" उपरोक्त कथन को मुंशी स्पष्ट करते हुए कहता है कि "बारह आने महसूल के भी तो लगेगा।" इस बात का उत्तर देते हुए काली कहता है -"महसूल तो मनीऑर्डर भेजनेवाला पहले ही दे देता है।"[51] इस वादविवाद से मुंशीजी चिढ़कर पूरा पैसा दे देता है। यहाँ स्पष्ट होता है कि जनता को सरकारी लोग किस प्रकार ठगते हैं। और यहाँ लगता है भ्रष्टाचार के मूल में अज्ञान भी है। अज्ञान के कारण मुंशीजी मनीऑर्डर में से रूपये लेता है परंतु पढ़ा-लिखा काली शिक्षा के कारण ही अपना पूरी मनीऑर्डर प्राप्त कर पाता है। जनता अपने अधिकारों के प्रति सजग हो जाय तो भ्रष्टाचार की मात्रा कम हो जाएगी, ऐसा लगता है।

'मोरी की ईंट' उपन्यास में भी मदन दीक्षितजी ने भ्रष्टाचार के विषय पर भी विचार किया है। चुंगी रिपोर्ट के जमादार हीरालाल झरगदिया की नौकरी उसकी पत्नी के नाम करने के लिए उसकी पत्नी मंगिया से कहता है कि "थोड़े से खर्च पानी का इंतजाम करो, दफ्तर की कोशिश पैरवी हम करके उनकी नौकरी तुम्हारे नाम करवा देंगे।"[52] मंगिया की नौकरी चुंगी डिपार्ट में डाक्टर की कोठी पर लग जाती है। उस विभाग के लोगों के काम मंगिया सीधे डाक्टरनी से कहकर करवा देने पर जमादार दु:खी होकर कहता है कि - "डिपार्टमेंट में मेहतर-मेहतरानियों के छोटे-मोटे काम करवाकर महीने में बीस-पचीस रूपये पीट लिया करता था, परंतु अब मंगिया वह काम मेमसाहब से कहकर वैसे ही करवा देती है।"[53] यहाँ पर हीरालाल बिना काम किये रूपये प्राप्त करता था जिस प्रकार मंगिया से रूपये लिये। परंतु मंगिया भ्रष्टाचार न करते हुए मेहतरानियों का काम करती है तब हीरालाल दु:खी होता है। यहाँ मंगिया का कार्य अनोखा रहा है ऐसे व्यक्ति समाज में होंगे तो भ्रष्टाचार पर रोक लगायी जा सकती है। प्रस्तुत उपन्यास में जंगल विभाग के कान्ट्रक्टर एडगर जोशी और पंत परिवार द्वारा अफसरों को खिलाने-पिलाने की कला का वर्णन किया गया है जिसमें भी भ्रष्टाचार की समस्या दिखाई देती है जो इस प्रकार - "एडगर जोशी और अंकिल पंत जंगलात की ठेकेदारी के लिए अफसरों को खिलाने-पिलाने की कला का उपयोग करते थे तथा खिलाने-पिलाने की कीमत ब्याज सहित वसूल करने की कला को बखूबी निभाते थे।"[54] इससे स्पष्ट होता है भ्रष्टाचार सिर्फ रूपयों में नहीं होता बल्कि खिलाने-पिलाने से भी होता है। यहाँ भ्रष्टाचार की व्यापकता स्पष्ट की है अर्थात अपने स्वार्थ-पूर्ति के लिए कोई भी किया हुआ अवैध कार्य भ्रष्टाचार ही है।

'आग-पानी आकाश' में रामधारी सिंह दिवाकरजी ने इस आधुनिक और जटिल भ्रष्टाचार की समस्या पर विचार किया है। प्रस्तुत उपन्यास में सरकारी अफसरों और पूँजीपतियों के द्वारा किये जाने वाले भ्रष्टाचार को चित्रित किया है। भ्रष्टाचार करवाने के लिए गांव की लड़कियों को भी रिश्वत के तौर पर पेश किये

जाने की कला का प्रयोग किया गया है। डी.सी.एल.आर. और पी.डब्ल्यू.डी. के अधीक्षण अभियंता को सोलकन्ह टोले की सुभगिया और मल्लाहिन की लड़की इसका उदाहरण है। ठेकेदारी करते समय भागवत बाबू को कोशीबाढ़ नियंत्रण शाखा के अधीन पन्द्रह लाख रूपये का ठेका मिलता है। काम चालू होने पर अचानक बाढ़ आने पर बोल्डर मिट्टी जो भी काम किया गया था वह सभी बह जाता है फिर भी उनका पूरा बिल पास हो जाता है। पी.सी.वगैरह देकर भी चार लाख रूपये एक ही बाढ़ के मौसम में मिल जाता है। परंतु अपने बिल के लिए सुभगिया का अवैध रूप में इस्तेमाल किया जाता है। ठेकेदार अपने फायदे के लिए कहाँ तक गिर सकते हैं। इसका यह प्रमाण है। भ्रष्टाचार का भी यही एक आयाम रहा है। जो अनैतिक, अवैध है। पी.डब्ल्यू.डी. के अधीन नदी के बड़े पुल का ठेका भागवत बाबू को उनके मंत्री मामा सुमरित लाल बैठा की सिफारिश पर मिल जाता है। उसी ठेके के काम में से लोहे की छड़ें, सीमेन्ट वगैरेह का उपयोग करके गांव में एक शिव मंदिर का निर्माण करवाते हैं। जिससे लोगों का जन समर्थन प्राप्त होता है। तथा चुनाव लड़कर मंत्री बनते हैं। आज अवैध रूप में प्राप्त संपत्ति का उपयोग धार्मिक कार्य कराने की और अपने आपको महान बनाने की नयी प्रवृत्ति लोगों में दिखाई देती है। उसी पर यहाँ व्यंग्य किया है। भागवत बाबू द्वारा अवैध सम्पत्ति से शिव मंदिर बनाना इसका उदाहरण है। आज के संदर्भ में यह प्रसंग यथार्थ लगता है। आधुनिकता बोध की दृष्टि से इसका चित्रण हुआ है।

यहाँ स्पष्ट है आलोच्य उपन्यासकारों ने भ्रष्टाचार के विविध रूपों पर प्रकाश डाला है। भ्रष्टाचार करने वाले सामान्य व्यक्ति नहीं उच्च पदों पर पहुँचे हुए लोग हैं। शिक्षा, विधि, विकास योजना में भ्रष्टाचार होना देश के विकास में बाधा है। परंतु इसका विरोध दिखाई नहीं देता। 'आग-पानी आकाश' में मंदिर निर्माण की घटना वर्तमान राजनीति पर प्रहार है। सामान्य जनता में जब-तक इसके खिलाफ विद्रोह नहीं होता तब तक उसे रोकना कठिन है। राजाश्रय से बढ़ने वाला भ्रष्टाचार आज भी सबसे बड़ी चुनौती है ऐसा लगता है। इस प्रकार के प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रीति से अनेक प्रकार के भ्रष्टाचार के मामलों पर उपन्यासकार ने गहराई से विचार करते हुए चित्रण किया है।

अशिक्षा की समस्या :-

भारत में आधुनिक शिक्षा का प्रारंभ 19 वीं शताब्दी में लॉर्ड मैकाले की शिक्षा नीतिसे हुआ। शिक्षा प्रसार के मूल में अंग्रेजों की मतलबी नीति रही। अंग्रेज शिक्षा के माध्यम से एक ऐसा शिक्षित वर्ग तैयार करना चाहते थे, जो उनकी शासन व्यवस्था की नींव को सुदृढ़ रख सके। विज्ञान, तंत्रज्ञान, औद्योगिक शिक्षा का प्रसार नहीं किया, सिर्फ बाबूजी या मुंशीजी बनाने की शिक्षा व्यवस्था की गई। परिणामतः उच्च वर्ग के लोग शिक्षित हो गये। देहात में रहने वाला व्यक्ति, दलित, मजदूर, किसान, नारी आदि सभी शिक्षा व्यवस्था से वंचित रहे। परिणामत: अशिक्षा की मात्रा बढ़ती रही। भारत सरकारने शिक्षा प्रसार और प्रचार के लिए कार्य

शुरु किया। अनिवार्य एवं मुफ्त शिक्षा की घोषणा की गई। गांव-गांव में पाठशालाएं खोली। छात्रवृत्ति, छात्रावास की योजना बनायी, परंतु इसका कितना लाभ हुआ ? कितने लोग शिक्षित हो गये ? यह भी सोचने का विषय रहा है।

भारतीय समाज व्यवस्था में प्राचीन काल में शूद्र और नारी को शिक्षा का अधिकार नहीं था। दलित लोग प्राचीन काल से अज्ञानी, अशिक्षित रहे हैं। शिक्षा की सुविधा उन्हें प्राप्त नहीं हो सकी। जातीय भेदाभेद के कारण दलितों को पाठशाला में प्रवेश नहीं मिलता, कभी-कभी पाठशाला के बाहर बैठाया जाता था। अर्थाभाव और गरीबी के कारण दलित समाज अज्ञानी रहा। ऐसे अज्ञानी समाज को शिक्षित बनाने का संदेश डॉ. अम्बेडकरजी ने दिया। परिणामत: आज का दलित शिक्षित हो रहा है। भारतीय संविधान के कारण आज का दलित अपने अधिकार के लिए आगे बढ़ रहा है परंतु देहात में रहने वाला दलित अशिक्षित है। उनके अज्ञान का फायदा जमींदार और सरकारी अफसर उठा रहे हैं। साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं में इस पर प्रकाश डाला हैं।

अज्ञान, अशिक्षा एक बड़ी समस्या है। जिसपर सबसे पहले महात्मा फुले जी ने सोचा और कहा - ''सभी समस्याओं की जड़ अशिक्षा और अज्ञान है।'' आज शिक्षा केंद्र राजनीति का अड्डा बन चुके हैं। आज तो धार्मिक शिक्षा एक विवाद का विषय बना है। शिक्षा क्षेत्र धर्म और राजनीति से अलग रहेगा तभी सभी लोग शिक्षा का लाभ उठा सकेंगे। डॉ.आशा मेहता के अनुसार - ''आज की शिक्षा संस्थाएं घृणित राजनीति का अखाड़ा बन गई हैं।''[55] आज का ग्रामीण दलित समाज राजनीति से दूर रहा है। भौतिक सुख-सुविधा से अलग पड़ा है। इसी कारण दलित समाज अज्ञानी और अशिक्षित रहा है ऐसा लगता है। परिणामत: उनका शोषण हो रहा है। आलोच्य उपन्यासकारों ने प्रस्तुत समस्या पर किसरूप में प्रकाश डाला है उस पर सोचेंगे -

डॉ. भगवती प्रसाद शुक्ल के 'खारे जल का गांव' (1972) में विंध्याचल के पहाड़ी अंचल में स्थित देवगांव और बेवहारी गांव में अशिक्षा की समस्या पर प्रकाश डालने का काम किया है। अशिक्षा, अज्ञान को हटाने के लिए पढ़े-लिखे युवक प्रौढ़ शिक्षा का कार्य कर रहे हैं। यहाँ अरविन्द जैसा युवक चमरहटी में जाकर प्रौढ़ शिक्षा केंद्र खोलकर प्रौढ़ों को साक्षर बनाने का कार्य करता है। दस-बारह लोगों को दो-दो घंटे पढ़ाकर शिक्षा के महत्व को भी बताता है तथा अशिक्षा से उत्पन्न होने वाली समस्याओं की जानकारी भी देता है। बेवहारी गांव में जमुना मास्टर जैसे लोग गांव में कॉलेज खोलना चाहते हैं। क्योंकि इस गांव के आस-पास नजदीक में कोई कॉलेज न होने के कारण ही लोग अशिक्षित हैं ऐसा उनका मानना है। केसरवानी परिषद भी 'केसरवानी कला-वाणिज्य महाविद्यालय' की स्थापना करता है। जिससे ऐसा लगने लगा है कि उस गांव के लोगों में शिक्षा के प्रति जिज्ञासा और जागृति पैदा होने लगी हैं। ''इन अंचलों में शिक्षा के रूप में नये प्रवास होने लगे हैं। इसलिए यहाँ केसरवानी कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय की स्थापना हुई।''[56] यह कथन इसी बात का

प्रमाण है। विंध्याचल के पहाड़ी इलाके में आदिम गौंड 40% हैं और 80% अशिक्षा का प्रमाण है। इससे ग्रामों में स्थित अशिक्षा की मात्रा स्पष्ट होती है।

'धरती धन न अपना' उपन्यास में जगदीश चंद्रजी ने शिक्षा के अभाव के कारण बनी दलितों की दयनीय स्थिति पर विचार किया है। अर्थाभाव, अज्ञान के कारण चौधरी, जमींदार दलितों का शोषण करते हैं। सूद के बदले बेगारी लेना, मुफ्त काम करवाने की उनकी नियत बनी है। शिक्षा के अभाव के कारण शोषण का पहिया घूमता है। चौधरी द्वारा होने वाला शोषण इसका प्रमाण है। वहाँ के चौधरी अशिक्षित दलितों को कर्ज देते है। उसके ब्याज के ही रूप में लोगों की कई पीढ़ियों से बेगारी करवाता रहता है। मंगू चमार इसका उदाहरण है। बनिया, साहूकार उधार सामान या रूपये देकर उसमें बढ़ोत्तरी करके तथा ब्याज पर ब्याज लगाकर अशिक्षित दलितों से पैसा वसूल करते हैं। काली के चाचा को दिया गया पैसा ब्याज सहित छज्जूशाह द्वारा काली से वसूल करना इसका प्रमाण है तथा काली का जब शहर से मनीऑर्डर आता है तब महसूल के नाम पर दुबारा पैसा काटना इत्यादि घटनाओं के पीछे शिक्षा का अभाव ही नजर आता है। जिसके परिणाम स्वरूप अनेक समस्याएं उत्पन्न होती दिखाई देती हैं। आलोच्य उपन्यासकारों ने इस तरफ भी सोचने का कार्य किया है ऐसा लगता है।

यहाँ स्पष्ट है वर्तमान काल में शिक्षा का व्यापक प्रसार हो रहा है। सामाजिक शिक्षा संस्था, सेवाभावी व्यक्ति, कार्यकर्ता शिक्षा प्रसार बल पर दे रहे हैं। सरकारी विकास नीति से लोग प्रभावित हो रहे हैं परंतु अशिक्षा की समस्या आज भी रही है। जातीय व्यवस्था,मानसिक कमजोरी, अर्थाभाव, सामाजिक झूठे मापदंड, अपने आपको हीन मानने की प्रवृत्ति आदि के कारण अशिक्षा की समस्या बनी रही है। परंतु 'खारे जल का गांव' का अरविन्द, केसरवानी ग्राम पंचायत, 'धरती धन न अपना' का काली, 'मोरी की ईंट' के मिशनरी और 'आग-पानी आकाश' के भागवत बाबू द्वारा स्थापित बी.एस. डिग्री कॉलेज आदि घटनाएं शिक्षा प्रसार के महत्व को स्पष्ट करती है। इससे स्पष्ट है आज धीरे-धीरे दलितों में शिक्षा के प्रति रूचि बढ़ने लगी है। जब तक वे शिक्षित नहीं होते तब तक उनका शोषण कम नहीं होगा।

अवैध यौन संबंधों की समस्या :-

भारतीय जनजातीय समाज व्यवस्था में यौन संबंधों की स्थापना के लिए विवाह संस्था के अतिरिक्त अन्य मार्गों से भी यौन संबंध स्थापित किये जाते हैं। कुछ जनजातियों में स्वच्छंदतापूर्वक यौन संबंध स्थापित करने की स्वतंत्रता रहती है तो कुछ जातियों में कठोर नियम भी लक्षित होते हैं। ''सेक्स मानव की आदिम भूख है, सामाजिक व्यवस्था को बनाये रखने के लिए आदमी ने सेक्स की भूख को दाम्पत्य के भीतर नियंत्रित किया ताकि सामाजिक संबंधों एवं मूल्यों की मूल धारणा को क्षति न पहुँचे।''[57] मनुष्य में काम यह एक ऐसा प्रवृत्ति है। साहित्य में भी इसी प्रवृत्ति को उभारा है। डॉ. रामदरश मिश्र के अनुसार - ''अधिकांश महानगरी कहानियाँ

और उपन्यास व्यक्ति को अहेतुक कामलीला को यौन संबंधों का यथार्थ रूप मान लेते हैं और एक आधुनिक समस्या बनाकर पेश करना चाहते हैं।"[58] मानव मन की इस प्रवृत्ति का साहित्य में चित्रण हो रहा है। चाहे ग्रामीण हो या नागरी जनजीवन में यौन संबंधों की समस्या सर्वत्र व्याप्त है। डॉ. महाजन के मतानुसार - "आदिम जातियों के लोगों के जीवन में काम विषय समस्याएं अपेक्षाकृत कम होती हैं जब कि सभयता और संस्कृति की दृष्टि से विकसित समाज में अधिक तीव्र और जटिल रूप में उत्पन्न होती है।"[59] विवाह बाह्य, विवाह पूर्व, विजातीय एवं अनैतिक संबंधों के चित्रण साहित्य में हो रहे हैं। इसका अधिक शिकार दलित समाज रहा है। उच्च वर्ग की विलासिता, कामुकता, भोगवादी दृष्टि, सामाजिक विषय परिवेश, अर्थभाव, नारी की बेबसी, लाचारी, बाल विवाह, बहु विवाह, अनमेल विवाह, विधवा विवाह का विरोध, भोगविलासी विचारों को प्रभाव, स्त्री-पुरूष का बढ़ता संपर्क, पवित्रता और नैतिकता के मापदंडों में आया हुआ अंतर, नई समाजव्यवस्था और सामंतवादी समाज व्यवस्था के कारण अवैध यौन संबंध बढ़ रहे हैं। जो एक समस्या के रूप में उभर रहे हैं। हिन्दी उपन्यासकारों ने इस समस्या पर गइराई से सोचा है। आलोच्य उपन्यासों में भी अवैध यौन संबंधों के कारण दलित समाज किस तरह पिसता जा रहा है उस पर सोदाहरण प्रकाश डाला है जो इस प्रकार है -

जगदीशचंद्र 'धरती धन न अपना' उपन्यास में पंजाब के रल्हन गांव में स्थित दलित जातियों में अवैध संबंधों की समस्या पर सोचा है। जमींदार, ठाकुर, चौधरी तथा सरकारी अफसर लोग दलित नारियों के साथ अवैध संबंध रखते हैं। अर्थाभाव, अशिक्षा के कारण दलित नारी अवैध संबंधों की शिकार बनी है। वहाँ की नारियाँ एक दूसरे पर अवैध संबंधों को लेकर कीचड़ उछालती हैं। प्रीतो और चाची प्रतापी के बीच में जब झगड़ा शुरू होता है उस वक्त दोनों एक दूसरे के अवैध संबंधों को स्पष्ट करती हैं। चाची प्रीतो को कहती है - "तू नत्थासिंह की जोरू, तू ऊँचे मोहल्लेवाले खड्गसिंह की रखैल, तू बाबक के लाला चमनलाल की लुगाई, तूने अपने गांव के तो क्या आस-पास के गांवों के बूढ़े तक को नहीं छोड़े, तुम्हें अब भी शर्म नहीं आती। दस बच्चों की माँ बन गयी है लेकिन तेरा तेल, सुर्मा और कंघी-पट्टी अब भी छोकरियों जैसी है।"[60] ये कथन प्रीतों के अवैध संबंधों को दर्शाता है।

प्रीतों की लड़की लच्छो और चौधरी हरनामसिंह का बेटा हरदेवसिंह के भी अवैध संबंध रहे हैं। दूसरी ओर काली और ज्ञानों का भी विवाह पूर्ण संबंध रहा है। दोनों का एक दूसरे से छुपकर मिलना उनके अवैध संबंधों को दर्शाता है। उस गांव में जाट और चमारों के बीच में अवैध संबंध रहे हैं। अवैध संतान के कारण कई बार संघर्ष हुआ है। जब चौधरी बूटा सिंह के लड़के को बग्गा चमार पीटता है। तब पंचायत के सामने बाबे फत्तू कहता है - "जब जाट और चमारों का खून मिलने लगा तो यह गड़बड़ होने लगी, अगर आज आपके ही खून ने आपके बच्चे को मारा है तो दु:ख क्यों हुआ?"[61] यह कथन अवैध संबंधों को स्पष्ट करता है।

मदन दीक्षित ने 'मोरी की ईंट' में मेहतर जातियो में स्थित अवैध संबंधों को यथार्थ रूप में चित्रित किया है। मंगिया और डॉ. सुरेंद्र पाण्डे का विवाहबाह्य अवैध संबंध, हीरालाल और रम्पिया का अवैध संबंध आदि के सहारे उपन्यासकार ने प्रस्तुत समस्या को चित्रित किया है। जब शराबी झरगदिया की जगह कोठी पर उसकी पत्नी मंगिया को रखा जाता है, तब डाक्टर पाण्डे उसके साथ शारीरिक संबंध स्थापित करते हैं। मंगिया को कोठी के पास ही रहने की व्यवस्था करते हैं। परिणामत: सोहन के रूप में अवैध सन्तान का जन्म होता है। डॉ. पाण्डे ने उसे नियमित रखैल का दर्जा दिया था।''[62] अवैध संतान को भी पितृत्त्व प्रदान करने की नीति यहाँ दिखाई देती है। सोहन के जन्म के बाद झरगदिया कहता है - ''सुनो पंचो सुनो आज से हम भी औलाद वाले हो गये हैं।''[63] जमादार हीरालाल भी सुंदर मेहतरानियों पर डेरा डालकर बैठता है। कभी-कभी अपने फायदे के लिये अफसरों के पास मेहतरानियों को भेज देता हैं। रम्पिया पर भी उनकी गिद्ध दृष्टि रही है। यहाँ स्पष्ट है स्वार्थ के लिए, कार्य पूर्ति के लिए अवैध संबंधों को बढ़ावा दिया जा रहा है।

रामधारी सिंह दिवाकरजी ने 'आग-पानी आकाश' में नगरों में रहनेवाले दलितों में स्थित अवैध संबंधों को चित्रित किया है। भूपति बाबू की छोटी पत्नी और इस्टेट के नाजिर का अवैध संबंध, भूपति नारायण सिंह और झुनकी धोबिन का विवाह पूर्व संबंध, भागवत बाबू अपने निजी स्वार्थ पूर्ति के लिए दुसाध टोली की सुभगिया और अधीक्षण अभियंता के बीच अवैध संबंध स्थापित करते हैं। ऐसे संबंधों में लड़की को खुश करने के लिए गहने, साड़ियाँ, कीमती जोड़े खरीदकर देते हैं। जैसा भागवत बाबू ने सुभगिया के साथ किया। अवैध संबंधों के बाद दवा-दारु देकर गर्भ गिरानेवाले डॉ. दिवान जैसे वैद्य भी दिखाई देते है।''[64]

जमींदार और धनवान लोग नारी को रखैल के रूप में रखकर संबंध स्थापित करते हैं। भूपतिनारायण सिंह ने झुनकी को रखैल के रूप में रखा। परंतु उसके लिए छोटा सा पक्का मकान बनवाते हैं। और जीविका के लिए दस एकड़ जमीन देते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि कई लोग अवैध संबंध रखकर भी नारी की रखवाली करते हैं। यहाँ स्पष्ट है कि समाज में अवैध संबंधों के अनेक प्रकार दिखाई देते है। जमींदार, ठाकुर, महाजन दलित नारी का शोषण करते हैं। परंतु 'मोरी की ईंट' में अवैध संतान को भी पितृत्व प्रदान करना और 'आग-पानी आकाश' में बाबू भूपति नारायण सिंह द्वारा रखैल को दस एकड़ भूमि दान करना एक अनोखी घटना है। अवैध संबंधों में ऐसा होता रहेगा तो अवैध संबंध समस्या नहीं रहेगी ऐसा लगता है।

धर्म परिवर्तन की समस्या :-

मानव जीवन पर धर्म एवं संस्कृति का प्रभाव रहता है। मानव अपनी सभ्यता, परम्परा, रूढ़ि को संस्कृति के बल पर सुरक्षित रखता है। मानव चाहे शहरी हो, चाहे ग्रामीण, पढ़ा-लिखा हो या अनपढ़, अपनी-अपनी संस्कृति एवं धर्म की रक्षा करना चाहता है। मगर जब मूल संस्कृति या मनुष्य को सुख एवं शान्ति नहीं देती

तब उसकी जगह मानव नई संस्कृति या धर्म का स्वीकार करता है। परिणामत: धर्म परिवर्तन एक महत्व पूर्ण घटना रही है। जिसका प्रभाव आज भी साहित्य में दिखाई देता है। धर्म एक शक्ति है, जो लोगों को रास्ता दिखाती है। दिनकरजी के मतानुसार - ''सर्वोत्तम बातों की जानकारी देना संस्कृति है।''[65]

आज व्यवस्था की नींव हिल रही है। नई शिक्षा-दीक्षा का प्रभाव, यातायात की सुविधा, ईसाईयों के बढ़ते संबंध के कारण संस्कृति संक्रमण और धर्म परिवर्तन की भावना बढ़ रही है। दलित जनजाति भी इसकी शिकार हुई है। आज देहातों में धर्मपरिवर्तन का सिलसिला जारी है। मतलबी धार्मिक लोग धन के बल पर लालच दिखाकर गरीब, अज्ञानी दलितों को धर्मपरिवर्तन के लिए प्रेरित कर रहे हैं। हाल ही में तमिलनाडू सरकार ने जबरन धर्मपरिवर्तन पर रोक लगाई है। इस निर्णय के दूरगामी परिणाम हो सकते हैं। परंतु आज धर्म परिवर्तन में ईसाईयों की नीति एक समस्या बनी है। साहित्यकारों ने इस समस्या पर विचार किया है। सुभाषिनी शर्माजी के मतानुसार - ''स्वार्थ, भौतिकता के कारण संस्कृति में संक्रमण हो रहा है।''[68] यह कथन दलितों के धर्मांतर पर भी प्रकाश डालता हैं।

डॉ. अम्बेडकरजी का धर्मांतर एक विशिष्ट स्थिति में महत्वपूर्ण है, जिसके कारण दलितों में चेतना की भावना पैदा हो गई। ईशकुमार कंदर्म के के मतानुसार - ''धर्मांतर की आवश्यकता उन आदिवासी दलितों व शोषितों को है जो पशुओं से भी बदतर नारकीय जीवन व्यतीत कर रहे हैं।'' यहाँ स्पष्ट है यदि शोषित लोग धर्मांतर करेंगे तो ठीक लगता है परंतु जानबूझकर मतलब की भावना से किया हुआ धर्मांतर एक चुनौती है। हिन्दी साहित्य में इस धर्म परिवर्तन की विचारधारा पर विचार किया है। वीरेन्द्र यादव का कथन है - ''धर्म परिवर्तन से उपजी उस जड़ विहीनता का परिणाम है जो उसे रोटी तो देता है लेकिन उससे उसकी अस्मिता छीन लेता है।''[67] योगेन्द्र सिन्हा, राजेन्द्र अवस्थी, शाम परमार, गुरूदत्त आदि जैसे साहित्यकारों ने इस समस्या पर विचार किया है। धर्मपरिवर्तन का सिलसिला जारी रहे तो सामाजिक व्यवस्था पर एक आघात है ऐसा संकेत साहित्यकारों ने दिया है। आलोच्य उपन्यासों में भी इसी दृष्टि से विचार किया है जो इसप्रकार है -

हिंदी साहित्य के नववें दशक के उपन्यासों में धर्मपरिवर्तन की समस्या को चित्रित किया हैं। ईसाई मिशनरियों के द्वारा सेवा के नाम पर धर्मपरिवर्तन कराने की कोशिश हो रही है। लालच दिखाकर दलितों को धर्म परिवर्तन के लिए प्रेरित किया जा रहा है। उस परउपन्यासकारों ने विचार किया है।

जगदीशचंद्रजी ने 'धरती धन न अपना' में प्रस्तुत समस्या पर विस्तृत विचार किया है। पादरी अचिन्त्यराम गांव-गांव जाकर हिन्दू देवी-देवताओं के बारे में कपोल-कल्पित कहानी बताकर लोगों के मन में देवी-देवताओं के बारे में संभ्रम पैदा करता है तथा ईसाई बनने के बाद मिलनेवाले फायदे बताता है। नौकरी-

चाकरी, शादी-ब्याह आदि की प्राप्ति होती है कहकर धर्म परिवर्तनके लिए प्रेरित करता है। पादरी से प्रभावित होकर नंदसिंह ने धर्म परिवर्तन किया। अपने धर्म परिवर्तन के बारे में नंदसिंह काली से कहता है -"हम ईसाई बनने के बाद में पादरी जी ने कह सुनकर लड़के प्रकाश को नौकरी दिला दी। अपनी बिरादरी बन जाय तो नौकरी-चाकरी और शादी ब्याह के सब बंदोबस्त हो जाते हैं। सबसे बड़ा फायदा तो यह है कि अब हम चमार नहीं रहे।"[68]

भारतीय समाज व्यवस्था में जातीय भेदाभेद और छुआछूत की भावना प्रबल रही है। इसी कारण शोषित, अछूत, दलित ईसाई बन जाते हैं। पादरी के दादा भी पहले हिन्दू थे परंतु अंत में वे ईसाई बन गये। पादरी काली से कहता है - 'मेरे दादा हिन्दू थे जब वह मरे तो काफी परेशानी का सामना करना पड़ा और पिताजी तंग आकर यीशू मसीहा की शरण में आकर ईसाई बन गये।' यहाँ स्पष्ट है शोषित दलित अपनी समस्याएं सुलझाने के लिए धर्म परिवर्तन कर रहा है। ठाकरी काली से कहती है - 'काली तू भी ईसाई क्यों नहीं बन जाता, चमार रहने में क्या मिलता है। अंत में काली और ज्ञानों ईसाई बनना चाहता है जिसके कारण उनकी शादी हो सकती है, परंतु ज्ञानो की उम्र छोटी होती है। इसलिए पादरी धर्मपरिवर्तन की इजाजत नहीं देता है। यहाँ स्पष्ट है कि हिन्दू दलित लोग मजबूर होकर धर्मपरिवर्तन कर रहे हैं। आधुनिक काल में यह धर्मपरिवर्तन एक सामाजिक और सांस्कृतिक समस्या बनी है।

मदन दीक्षित ने 'मोरी की ईंट' में भी धर्मपरिवर्तन की समस्या पर विचार किया है। नगर, महानगरों में रहनेवाली मेहतरानियाँ क्रिस्टॉन बनकर बड़े-बड़े घरों में 'आया' का काम करती हैं क्रिस्टाईन होने के बाद मेहतरी जाति का टीका फीका हो जाता है। धर्म परिवर्तन करने से क्या संस्कार और देवी-देवता को भूलना पड़ता है यह प्रश्न यहाँ उपस्थित किया है। सैम्युअल की माँ कहती है - "ये लोग ईसाई हो गये तो क्या अपने देवी-देवताओं को भी छोड़ देगें।"[69]

अल्मोड़ा के नंदलाल पंत और मोहन जोशी पुरखों के धर्म को तिलांजली देकर सांसारिक सुख-सुविधाओं के लिए ईसाई धर्म का स्वीकार करते हैं। ईसाई होना उनकी निगाहों में एक लाभ ही था। ईसाई बनने पर रोर्जी-रोटी की समस्या हल होती है परंतु संस्कार समाप्त नहीं होते। ईजा कुमैयाँ ब्राह्मणी थी। रूढ़ि में आस्था रखती थी। वह अंत में ईसाई बनती है परंतु उसकी अंतिम इच्छा यह थी कि उनकी अंत्येष्टि एक ब्राह्मणी की तरह ही हो। अंत में उसकी मृत्यु के बाद किराये के ब्राह्मण से उनकी अन्त्येष्टि करायी गई। अस्थियाँ विसर्जित करके ब्राह्मणों के लिए 'मृतक भोज' का प्रबंध किया गया। इससे स्पष्ट है कि ईसाई होने पर भी संस्कार समाप्त नहीं होते। ईसाई लोग राम, कृष्ण, शंकर, दुर्गा आदि देवी-देवताओं की निंदा भी करते हैं।

धर्म परिवर्तन करने से न संस्कार बदलते हैं न जात, न पिंड। खैराती का बड़ा भाई उसे समझाते हुए कहता हैं कि - ''धर्म की तोबा पलटी से हमारी जात पर कोई असर नहीं पड़ता। मुसलमान बना लिया तो लालबेगी कहने लगे, हलालखोर कहने लगे, अल्लन, बिल्लन, अहमदा, मुहमदा नाम रख दिया। सिख बना लिया तो मजहबी कहने लगे - झंडासिंह, गंडासिंह, बंटासिंह, बसंतासिंह नाम रख दिया। ईसाई बना लिया तो जॉनसन, थाम्पसन, एडविन नाम रख दिया। रहे मेहतर के मेहतर, नरक बटोरने का पट्टा हमारे नाम बदस्तूर कायम रहा।''[70]

मिशनरी लोग ईसाई धर्म प्रसार के लिये कार्य कर रहे हैं तो दूसरी ओर अछूतोद्धार और हरिजन सेवा के नाम पर समाज में एकता स्थापित करने का कार्य आर्य समाजी और कांग्रेसी नेता लोग कर रहे हैं। आर्य समाजियों का खास इरादा मेहतरों में ईसाईयों की घुसपैठ पर अंकुश लगाना ही था। यहाँ स्पष्ट है कि धर्म परिवर्तन पर रोक लगाने का कार्य आर्य समाज के द्वारा हो रहा है।

आज की भारतीय राजनीति में इस धर्मपरिवर्तन ने हलचल मचायी है। देश में सांप्रदायिक तनाव निर्माण करने का कार्य इसी समस्या ने किया है। परिणामत: कई सरकारों ने कानून के सहारे जबरन धर्म परिवर्तन का विरोध किया है। जैसे तमिलनाडू सरकार ने ऐसा कानून बनाया है तो गुजरात की नई सरकार इस समस्या पर विचार कर रही है।

नशापान की समस्या :-

नशापान की समस्या कुछ दशकों पहले एक नैतिक समस्या एवं सामाजिक अनुत्तरदायित्व का लक्षण समझा जाता था। नशापान वह स्थिति है जिसमें शराब पीने वाला अपने आप पर नियंत्रण खो बैठता है। अपना गम भूलाने के लिए, व्यथा से छुटकारा पाने के लिए कई लोग शराब का आधार लेते हैं। तो कई लोग नशा के आदती बन जाते हैं, कई जनजातियों में विशेषत: आदिम जनजातियों में मेहमान के स्वागत के लिए शराब दी जाती है। आज बदलते नैतिकता के मापदण्डों में भले ही नशापान समस्या न हो परंतु गरीब, देहाती लोगों में नशापान एक समस्या है। अवैध धंधा करने वाले लोग अवैध रूप में शराब, अफीम, चरस बेंचते हैं। ग्रामीण लोग, दलित लोग, अशिक्षित लोग उनके शिकार बने हैं। ''अंधविश्वास और अज्ञान के कारण व्यसनाधीनता बढ़ रही हैं, जिसके कारण कई स्वास्थ्य विषयक समस्याएं पैदा हो गई हैं।''[71]

भारत सरकार ने अवैध रूप में शराब की विक्री पर रोक लगाई है। भारत में लगभग दस से पन्द्रह प्रतिशत व्यक्ति मदिरापान करते हैं। सरकार को शराब की विक्री से आय तो प्राप्त होती है परंतु सामाजिक स्वास्थ्य की दृष्टि से मद्यपान एक समस्या बनी है। सामाजिक विचलन और सामाजिक समस्याएं नशापान के

दुरूपयोग से उपजती है। अत: नशापान एक समस्या बनी है। साहित्यकारों ने उस पर सोचा है। आलोच्य उपन्यासों में भी इसका चित्रण हुआ है। जो इस प्रकार है -

जगदीश चंद्रजी ने 'धरती धन न अपना' में रल्हन गांव के दलितों की नशा आदती पर विचार किया है। ये लोग शराब पीते है। अफीम, सिगरेट तथा हुक्का भी पीते हैं। किसी के साथ झगड़ा करने के लिए, उकसाने के लिए शराब पिलाई जाती है। मंगू निक्कू को काली के साथ झगड़े के लिए उकसाता है, वह कहता वह कहता है - ''अगर तुमने मैदान मार लिया तो रात को दारू पिलाऊँगा।''[72] काली सिगरेट न पी कर हुक्का पीता है। दिलसुख शराब का आदती है। उसकी नशा रोकने के लिए लालू पहलवान उसे समझाते हुए कहता है - ''आज तू फिर पीकर आया है। क्यों तेरी मौत तुम्हें आवाज दे रही है ? कुछ तो शर्म करो।''[73]

'मोरी की ईंट' का झरगदिया अपना गम भूलने के लिए शराब पीता है। जब मंगिया पांडे के पास जाती है तब झरगदिया सुबह से ही शराब पीता है। हिरिया चाची का कथन है - ''मंगो आज तुम्हारे झरगद ने बड़ा जसन मनाया है, तुम्हारे घर में कच्ची शराब की गंगा बह रही है।'' तो 'आग-पानी आकाश' के भूपति बाबू कभी-कभी विदेशी शराब की जगह देशी से काम चलाते हैं। धोबियाही मुहल्ले के लोग रात के समय ताड़ी पीकर लड़खड़ाते हुए अल्ल-बल्ल बोलते हुए निकलते हैं तो कभी-कभी गालियाँ भी देते हैं। वहाँ कई ऐसे परिवार हैं जिसमें बाप और बेटे एक साथ बैठकर शराब पीते हैं।

यहाँ स्पष्ट है कि दलित लोग किसी-न-किसी बहाने नशा के आदती बने हैं। इसका विरोध कोई पात्र नहीं करता। सिर्फ 'धरती धन न अपना' का लालू पहलवान और 'आग-पानी आकाश' के भागवत बाबू की शिक्षिका पत्नी शकुंतला नशापान का विरोध करते हैं, परंतु उन्हें अधिक सफलता नहीं मिलती।

निष्कर्ष :-

''हिन्दी उपन्यासों में चित्रित दलित जीवन की समस्याएं'' इस अध्याय में मैंने अंधविश्वास की समस्या के अंतर्गत भूत-प्रेत, चुड़ैल-डायन, पाप-पुण्य, शकुन-अपशकुन, शुभ-अशुभ, मंत्र-तंत्र, जादू-टोना, जड़ी-बूटी संबंधी अंधविश्वास, शोषण की समस्या के अंतर्गत जमींदारों द्वारा शोषण, धार्मिक व्यक्ति द्वारा शोषण, सरकारी अफसरोंद्वारा शोषण, पुलिस द्वारा शोषण, राजनीतिक नेताओं द्वारा शोषण, नारी शोषण आदि, जातीय भेदाभेद की समस्या, भ्रष्टाचार की समस्या, अवैध यौन संबंधों की समस्या, धर्म परिवर्तन की समस्या, नशापान की समस्या आदि समस्याओं पर विस्तार के साथ सोचा है। इन समस्याओं के अतिरिक्त यातायात का अभाव, भौतिक सुविधा का अभाव, नशापान की समस्या आदि गौण समस्याएं आलोच्य उपन्यासों में यत्र-तत्र दिखाई देती है। उन्हें भी समाकलित किया है।

भारतीय समाज में अंधविश्वास की मात्रा अधिक रही है। दलित समाज भी इसके लिए अपवाद नहीं। अज्ञान, अशिक्षा, भय, धार्मिक मान्यता, झूठी मानसिकता के कारण अंधविश्वास बढ़ रहा है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण की अपेक्षा श्रद्धा का भाव अधिक रहा है। पुत्र प्राप्ति के लिए, बीमारी हटाने के लिए, बरसात के लिए, मनोकामना पूर्ति के लिए भगवान से प्रार्थना करना, बलि देना, किसी घटित घटना का संबंध भविष्य की होने वाली घटना से जोड़ना, दलितों के स्पर्श से वस्तु का अपवित्र होना, दक्षिणा-दान देना, दलित-हीन लोगों का शिक्षित न होना, 'भुतही इमली' को मानना, अतृप्त मृत आत्मा को चुडैल डायन मानना, उसके आतंक से डरना, दवा की अपेक्षा दुवा पर बल देना, मंत्र-तंत्र-जड़ी-बूटी को महत्व देना, भूत-पिशाच्च, डायन से मुक्ति के लिए मंत्र-तंत्र पढ़ना, भूत-पिशाच का बीमारी से संबंध जोड़ना, भूत का शरीर में प्रवेश करना, पाप-पुण्य संबंधी गलत धारणाओं का होना, आदि के बारे में आज भी उनमें अंधविश्वास दिखाई देता हैं। धर्म-कर्म, देवी-देवता, भक्ति-मुक्ति के नाम पर अंधविश्वास को बढ़ावा दिया जा रहा हैं। आज शिक्षा प्रसार, अनिवार्य मुफ्त शिक्षा के कारण अंधविश्वास की मात्रा कम हो रही है। सामाजिक संस्था, सेवा भावी संस्था, अंधश्रद्धा निर्मूलन समिति, अंधश्रद्धा का विरोध कर रही है। 'खारे जल का गांव' के अरविन्द सुग्रीव इत्यादि बलिप्रथा का विरोध करते हैं। 'धरती धन न अपना' के काली द्वारा धार्मिकता का विरोध किया जाना, तो 'एकलव्य' के एकलव्य द्वारा द्रोण की शिक्षा संबंधी, पाप-पुण्य धारणा की खाल उतारना आदि घटनाएं अंधश्रद्धा के खिलाफ उठाने वाली जनचेतना को दर्शाती है। बीसवीं शती के उपन्यासों में अंधश्रद्धा के दर्शन कम मात्रा में हो रहे हैं।

समाज जीवन की महत्वपूर्ण समस्या शोषण रही है। अर्थाभाव, अज्ञान, कमजोर मनोवृत्ति, एकता का अभाव, आदि के कारण शोषण हो रहा है। दलित समाज में यह सभी प्रवृत्तियाँ रही है। अत: उनका जमींदार, पुलिस अफसर, धार्मिक व्यक्ति, राजनीतिक व्यक्ति द्वारा शोषण हो रहा है। जमींदारों की प्रवृत्ति आज भी दिखाई देती है। किसान, दलित, अछूत की जमीने हड़पना, उनसे बेगार लेना, मजदूरी नहीं देना, औरतों की अस्मत लूटना, नारियों की पिटायी करना, झूठे आरोप लगाकर जेल भेजना, सरकारी अफसरों के साथ संबंध रखकर गरीबों पर आतंक जमाना, हमेशा दबाव बनाये रखना, गंदी राजनीति करना, विरोध करने वालों का कत्ल करना, गालियाँ देना, गन्दे शब्दों का प्रयोग करना, मकान और खेती का नीलाम करना, आदि विविध आयामों में जमीदार दलितों का शोषण करते हैं। जमीदारों की ऐंठन और हथकंडे को आज भी उनके वंशजों द्वारा अपनाया जा रहा हैं। आज संगठन, एकता, संघ, शिक्षा प्रसार के बल पर जमींदारों के अन्याय को रोकने का कार्य शुरू हुआ है। पढ़ा-लिखा दलित संगठित हो रहा है। 'खारे जल का गांव' में 'नवयुवक क्रांति मोर्चा' और 'मोरी की ईंट' में 'मेहतर संघ' की स्थापना होना इस बात का प्रमाण है। अब दलित अपने ऊपर होने वाले अन्याय का डटकर विरोध कर रहा है। चुनाव लड़कर राजनीति स्तर पर भी संघर्ष कर रहा है ऐसा लगता है।

धर्म का मानवी जीवन में अत्यंत प्रभाव एवं महत्व है। किसी भी कार्य का संबंध धर्म के साथ जोड़ने की प्रवृत्ति रही है। धर्म, धार्मिक व्यक्ति को महत्व देना, पूजा-पाठ करना, जादू-टोना करना, दान देना, भगवान का प्रसाद बांटना, दलितों को मंदिर में प्रवेश न देना, उनके स्पर्श से मंदिर व देवता का अपवित्र होना, ऐसा मानना आदि रूप में धार्मिक व्यक्ति द्वारा शोषण हो रहा है। 'खारे जल का गांव' में मंदिर प्रवेश को लेकर नारियों की पिटाई होना, चमरहटी में शिक्षा केंद्र खोलने से धार्मिक व्यक्ति और पंचायत द्वारा विरोध होना, 'धरती धन न अपना' में मंदिर के पास जाने वाले चमारों को संतराम पंडित द्वारा दूर से दुर-दुर करना आदि घटनाएं धार्मिक शोषण को दर्शाती हैं। परंतु अरविन्द, काली, सुग्रीव, नरइना इसका विरोध करते हुए नई चेतना को दर्शाते हैं। धार्मिक व्यक्ति पाप-पुण्य का आधार लेकर लोगों की भावना के साथ खिलवाड़ करके धन कमाता है। मंदिर बनाकर नेता बनने की इच्छा रखता है आदि के दर्शन भी हो रहे हैं। राजनीतिक लोग भगवान, मंदिर आदि क्षेत्रों में प्रवेश करके स्वार्थ का अड्डा बनाने में जुटे हैं। इस पर भी उपन्यासकारों ने प्रकाश डाला है। 'आग-पानी आकाश' उपन्यास इसका प्रमाण है।

बीसवीं शदी के विकास का प्रधान अंग सरकारी अफसर और पुलिस व्यवस्था रही है। परंतु विकास के साथ-ही-साथ दलित, किसान, गरीब के शोषण का आयाम भी बनी है। पुलिस का जमींदारों से दोस्ती होना, रिश्वत लेना, बेकसूर लोगों की पिटाई करना, उन्हें जेल भेजना, नारी की छेड़-छाड़ करना, पूँछताछ का बहाना बनाकर दलितों को धोखा देना आदि रूप में पुलिस जनता का शोषण कर रही है। उनका साथ सरकारी अफसर भी दे रहे हैं। 'खारे जल का गांव' में जुलूस पर लाठी चलाना, 'साप्ताहिक क्रांति पथ' पर छापा डालना, जमींदारों से रिश्वत लेकर चनकी, मटिया पर झूठे आरोप लगाना, रिश्वत लेकर मामला दर्ज करना, 'धरती धन न अपना' में मनीऑर्डर देते समय कम रूपये देना, 'मोरी की ईंट' में सरकारी अफसरोंद्वारा मेहतरानियों को कोठी पर रखना, पढे-लिखे दलित भागवत बाबू द्वारा नियुक्ति के समय रूपये लेना, आदि विविध रूपों में शोषण दिखाया है। 'आग-पानी आकाश' में पढ़े-लिखे दलित द्वारा दलितों का होनेवाला शोषण दिखाकर एक नयी समस्या को उजागर किया है।

राजनीतिक नेता सेवा के नाम पर सत्ता प्राप्त करके जनता का शोषण कर रहे हैं। भारतीय राजनीति का, प्रजातंत्र का एक घिनौना रूप इसमें दिखाई दे रहा है। वोट खरीदना, जाति के आधार पर चुनाव लड़ना, पद-सत्ता का दुरूपयोग करना, विपक्षी नेता की पिटाई करना, चुनावी टिकट का लालच दिखाना, कत्ल करना, ठेका लेना, भाई-भतीजा वाद को बढ़ावा देना, पुलिस से दोस्ती करेके अवैध धंधे करना आदि रूप में यह शोषण दिखाई दे रहा है। 'खारे जल का गांव' में अरविन्द को मंत्री द्वारा चुनावी टिकट का लालच दिखाना, अरविन्द को जख्मी करना, जमींदार द्वारा दोनों ओर से निलामी करना, 'धरती धन न अपना' में चमारों द्वारा

बायकाट करना, 'मोरी की ईंट' में जातीयता, धर्म द्वारा राजनीतिक खेल खेलना, 'आग-पानी आकाश' में भागवत बाबू द्वारा जाति का आधार लेकर चुनाव लड़ना परंतु स्वजातियों को भूल जाना आदि पर सोचा है। 'आग-पानी आकाश' की यह एक नई समस्या लगती है जिस पर उपन्यासकार ने अंगुली निर्देश किया है।

नारी शोषण के अंतर्गत नारी का अधिकार से वंचित होना, उसकी अस्मत लूटना, विवाहको अधिकार न होना, धार्मिक व्यक्ति, जमींदार, अफसर द्वारा शोषण होना, बेगार लेना, पिटाई होना, परिवार में अपमानित रहना, शिक्षा से वंचित रखना, रखैल बनाना, विधवा होना, आदि कई नारी विषयक समस्याओं को स्पष्ट किया है। नारी का जीवन, असुरक्षित रहना, पुनर्विवाह का अधिकार न होना, वैधव्य में जीवन बिताना, अवैध संबंध के लिए मजबूर करना, अवैध मातृत्व का बोझ ढोना, अंत में आत्महत्या करने पर मजबूर होना, आदि घटनाओं से नारी जीवन की समस्याएं चित्रित की है। आज धीरे-धीरे नारी में अस्मिता, चेतना की भावना बढ़ रही है। अन्याय के खिलाफ फटकारने वाली 'खारेजल का गांव' की चनकी, 'धरती धन न अपना' की ज्ञानो, 'मोरी की ईंट' की मंगिया तो अपना वैधव्य भूलकर टेलरिंग का कार्य करके अपने पांवों पर खड़ी रहने वाली बेचनी, शिक्षित बनी भागवत बाबू की पत्नी शकुंतला आदि नारी पात्र परिवर्तित नारी जीवन को दर्शाती हैं। परंपरागत ढंग से शोषित नारी का रूप अब परिवर्तित हो रहा है।

जातीय भेदाभेद की समस्या के अंतर्गत जातिबाह्य विचार का निर्णय, जातिबाह्य कर्म का विरोध, पाठशाला और मंदिर में प्रवेश निषेध, पनघट अलग होना, उनपर झूठे आरोप थोपना, अपनी जाति को श्रेष्ठ मानकर दूसरों को हीन बताना, जातिपंचायत का आधार लेकर जाति-जाति में संघर्ष बनाये रखना आदि आयामों में आलोच्य उपन्यासों में जातीय भेदाभेद की समस्या दिखाई देती है। 'खारे जल का गांव' में ग्राम व्यवस्था में जातीयता दिखाई देती है। अरविन्द इसका विरोध करता है। 'धरती धन न अपना' में काली और अन्य चमारों के साथ भेदभाव किया जाता है। दुकानदार द्वारा हीन-अछूतों के लिए अलग व्यवस्था की जाती है। 'एकलव्य' में तो शिक्षा व्यवस्था में स्थित जातीयता की नयी व्याख्या स्पष्ट चित्रित की है। 'आग-पानी आकाश' में जातीयता की नई प्रवृत्ति चित्रित की है। पढ़ा-लिखा नागरी संस्कृति में रहने वाला दलित देहातों में रहने वाले दलितों की उपेक्षा कर रहा है। यह एक नयी जाति व्यवस्था पनप रही है। उस पर भी उपन्यासकारों ने प्रकाश डाला है। जाति व्यवस्था में जाति पंचायत का महत्व रहा है। जातिपंचायत शिक्षाप्रसार में योगदान दे रही है। यह उसका विधायक रूप रहा है 'केसरवानी महाविद्यालय' और 'मेहतर संघ' इसके उदाहरण हैं।

भ्रष्टाचार की समस्या के अंतर्गत जमींदारों, महाजनों के साथ दांत-काटी-रोटी का संबंध प्रस्थापित करके पुलिसों द्वारा भ्रष्टाचार करना, अवैध धंधों को बढ़ावा देने के लिए रिश्वत लेना, राजनीतिक दल-बदल के लिए भ्रष्ट नीति को अपनाना, लालच दिखाना, बेकसूर किसानों पर झूठे जुल्म थोपकर फायदे के लिए रिश्वत

देना, आदि कई भ्रष्टाचार के प्रकार उपन्यासों में लक्षित होते हैं। आज भी भ्रष्टाचार ने भयावह रूप लिया है। वह देश के लिए चुनौती बन गया है। अनैतिकता, स्वार्थ, मतलबी विचारधारा, कम श्रम से धन कमाना, आदि के कारण भ्रष्टाचार हो रहा है। परंतु राजनीतिक नेताओं के आश्रय के कारण यह और भी पनप रहा है, उस परभी उपन्यासकारों ने प्रकाश डाला है। शिक्षा, विधि जैसे पवित्र क्षेत्रों में भ्रष्टाचार हो रहा है। इसी कारण देश के विकास में रूकावटें पैदा हो रही है। अतः जब तक भ्रष्टाचार रहेगा, तब तक विकास संभव नहीं।

अवैध यौन संबंधों की समस्या पर भी सोचा है। इस समस्या के अंतर्गत विवाह पूर्व यौन संबंध, विवाह बाह्य संबंध, धार्मिक व्यक्ति, जमींदार, अफसर द्वारा प्रस्थापित अवैध संबंध, लाभ के लिए अवैध संबंध रखने के लिए विवश करना, अवैध मातृत्व का बोझ उठाना आदि विविध रूपों में अवैध यौन संबंध दिखाई देते हैं। जमींदार, धनवान लोग इस अवैध संबंध से रखैल प्रथा को बढ़ावा दे रहे हैं। 'मोरी की ईंट' में अवैध संतान को पितृत्व प्रदान करके एक आदर्श प्रस्तुत किया है। तो 'आग-पानी आकाश' में रखैल को जीवन यापन हेतु जमीन व मकान देने की घटना महत्वपूर्ण लगती है, अर्थात यहाँ बदलती मानसिकता चित्रित है।

दलित समाज के जीवन में एक नई समस्या धर्म परिवर्तन की है। दलितों के अज्ञान, अर्थाभाव का मिशनरी फायदा उठाकर उन्हें धर्म परिवर्तन के लिए प्रेरित कर रहे हैं तो दूसरी ओर जातीय व्यवस्था, जातपंचायत, छुआछूत की भावना के कारण भी दलित धर्मपरिवर्तन कर रहे हैं। आम्बेडकरजी द्वारा 'धर्मपरिवर्तन' की घटना दलितों के लिए एक मिशाल बनी है। धर्म परिवर्तन की समस्या बीसवीं शदी के उपन्यास में प्रधान रूप से दिखाई देती है। 'मोरी की ईंट', 'धरती धन न अपना' आदि उपन्यास में इसका चित्रण हैं। धर्म परिवर्तन से सामाजिक व्यवस्था में हलचल पैदा हो रही है। सांप्रदायिकता को बढ़ावा देने वाली धर्म परिवर्तन एक समस्या रही हैं।

इसके साथ-ही-साथ नशापान की समस्या, भौतिक सुविधा का अभाव की समस्या, यातायात की असुविधा, आदि गौण समस्याओं का दर्शन आलोच्य उपन्यासों में हो रहे हैं। दलित जीवन का शोषित, उपेक्षित, समस्या प्रधान जीवन दिखाई दे रहा है।

अतः स्पष्ट है दलितों का जीवन समस्या और अभावों में अटका हुआ है। जातीय भेदाभेद, अंधविश्वास, अज्ञान, असुविधा, अवैध संबंध, रूढ़ि-परंपरा की कमजोर मानसिकता के कारण समस्याएं बढ़ रही हैं। सरकार दलितों के विकास के लिए कार्य कर रही है, परंतु विकास से सभी लाभान्वित नहीं हो रहे हैं। इसी कारण दलित उपेक्षित रहा है। सरकार की उदारनीति, जनसंगठन, सहयोग, समाज सेवी संस्था का सहयोग, दलित नेताओं की समाज सेवी वृत्ति, आदि के बल पर सभी समस्याएं हल हो सकती हैं। जब तक समस्याऐं रहेंगी, तब तक विकास की गति धीमी रहेगी। 'रामराज्य' और 'ग्रामराज्य' का सपना 'सपना' ही रहेगा।

शिक्षाप्रसार की सुविधा के कारण दलित जीवन प्रभावित हो रहा है। समाज सेवी संस्था के कार्य के कारण अंधविश्वास की भावना कम हो रही है। राजनीतिक आश्रय के बल पर दलित संगठित होकर संघ अथवा गुट बनाकर अपने अधिकार के लिए संघर्ष करने लगा है। परिणामतः शोषण से वह मुक्ति पा रहा है। नारी चेतित बनकर विद्रोही बनी है। अज्ञान, अशिक्षा, नशापान की भयावहता से पीड़ित दलित आज उससे दूर जा रहा है। स्वास्थ्य की सुविधा प्राप्ति से जीवन परिवर्तित हो रहा है। भ्रष्टाचार, भूख, बेकारी, अवैध धंधे जैसी समस्या कम हो रही हैं। अतः सभी समस्याओं की जड़ अज्ञान, अशिक्षा और अर्थाभाव ही है। जब ऐसी सुविधाएं उपलब्ध होंगी तब सभी समस्याएं समाप्त होगी। इसलिए दलितों में शिक्षा-प्रसार, शिक्षा के प्रति जागृति पैदा होना अनिवार्य है।

संदर्भ सूची :-

1) फ्रांसिस ई. मेरील, 'सोसायटी ॲण्ड कल्चर', पृ.46

2) गोपाल कृष्ण शर्मा, 'उपन्यास और समाज', 1986, तारामंडल प्रकाशन, अलीगढ़, पृ.102

3) राम अहूजा, 'सामाजिक समस्याएं', द्वि.सं.2000, रावत पब्लिकेशन, दिल्ली, पृ.2

4) डॉ. शशिभूषण सिंहल, 'हिन्दी उपन्यास की प्रवृत्तियाँ', 1970, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, पृ.14

5) डॉ. सुनंदा पालकर, 'समाजवादी उपन्यासकार भैरवप्रसाद गुप्त', 1997, विकास प्रकाशन, कानपुर, पृ.259

6) डॉ. शामसिंह शशि, ''हिमालय के खानाबदोश' 1978, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, पृ.14

7) विवेकी राय, ''स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कथा साहित्य और ग्राम जीवन'', 1974, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ.271

8) रामलाल विवेक, ''आधुनिक भारत के निर्माता पंडित जवाहरलाल नेहरू'', 1989, श्याम प्रकाशन, जयपुर, पृ.136

9) प्रा.सो.सरयू अनंत राम, ''सामाजिक संस्था'', 1977, महाराष्ट्र ग्रंथ निर्मिती, नागपुर, पृ.243

10) डॉ. भगवती प्रसाद शुक्ल, ''खारे जल का गांव'' 1972, स्मृति प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ.63

11) मदन दीक्षित, ''मोरी की ईंट'', 1996, शब्दकार प्रकाशन, दिल्ली, पृ.42

12) चंद्रमोहन प्रधान, ''एकलव्य'', 1997, अनुराग प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.123

13) अमरसिंह रणपतिया, ''हिमांचली लोकसाहित्य'', 1987, सन्मार्ग प्रकाशन, दिल्ली, पृ.107

14) जगदीश चंद्र, ''धरती धन न अपना'', 1981, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.176

15) मदन दीक्षित, ''मोरी की ईंट'', 1996, शब्दकार प्रकाशन, दिल्ली, पृ.62

16) आनंद यादव, ''1960 नंतरची सामाजिक स्थिति आणि साहित्यातील नवे प्रवाह'', 2001, मेहता पब्लिकेशन, पुणे, पृ.16

17) भगवतीचरण वर्मा, ''चित्रलेख'', 1988, भारती भंडार, इलाहाबाद, पृ.175

18) डॉ. बलवन्त साधू जाधव, ''प्रेमचंद साहित्य में दलित चेतना'', 1992, अलका प्रकाशन, कानपुर, पृ.183

19) डॉ. प्रभा बेनीपुरी, ''बेनीपुरीजी के नाटकों में सामाजिक चेतना'', 1989, कॅपिटल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली, पृ.133

20) डॉ. भगवती प्रसाद शुक्ल, ''खारे जल का गांव'' 1972, स्मृति प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ.11

21) जगदीश चंद्र, ''धरती धन न अपना'', 1981, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.22

22) डॉ. ज्ञानचंद गुप्ता, ''स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास और ग्राम चेतना'', 1974,अभिनव प्रकाशन, दिल्ली, पृ.188

23) डॉ. भगवती प्रसाद शुक्ल, ''खारे जल का गांव'' 1972, स्मृति प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ.14

24) डॉ. भगवती प्रसाद शुक्ल, ''खारे जल का गांव'' 1972, स्मृति प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ.82

25) वही, पृ.90

26) वही, पृ.135

27) रामधारीसिंह दिवाकर, ''आग-पानी आकाश'', 1999, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली, पृ.138

28) डॉ. नाशित कुमार, ''समाजवादी हिंदी उपन्यासों में चरित्रांकन'', 1997, जवाहर पुस्तकालय, मथुरा, पृ.89

29) आशारानी व्होरा, ''भारतीय नारी दशा और दिशा'', 1983, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली, पृ.8

30) जगदीश चंद्र, ''धरती धन न अपना'', 1981, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.106

31) डॊ. देवेश ठाकूर, ''मैला आँचल की रचना प्रक्रिया'', 1987, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.68

32) राम अहूजा, ''भारतीय सामाजिक व्यवस्था'', 1995, रावत पब्लिकेशन, दिल्ली, पृ.204

33) ज्योत्सना शर्मा, ''शिवानी का हिन्दी साहित्य : सामाजिक परिप्रेक्ष्य में'', 1994, अन्नपूर्ण प्रकाशन, कानपुर, पृ.165

34) डॉ. भगवती प्रसाद शुक्ल, ''खारे जल का गांव'', 1972, स्मृति प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ.12,

35) वही, पृ.12

36) जगदीश चंद्र, ''धरती धन न अपना'', 1981, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.37-38

37) वही, पृ.59

38) वही, पृ.140-141

39) वही, पृ.200

40) मदन दीक्षित, ''मोरी की ईंट'', 1996, शब्दकार प्रकाशन, दिल्ली, पृ.9

41) रामधारीसिंह दिवाकर, ''आग-पानी आकाश'', 1999, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली, पृ.136

42) डॉ. चमनलाल गुप्ता, ''यशपाल के उपन्यास : सामाजिक कथा'', 1988, शारदा प्रकाशन, दिल्ली, पृ.118

43) डॉ. अनिला रावत, ''अमृतलाल नागर केउपन्यासें में आधुनिकता'', 1998, चंद्रलोक प्रकाशन, कानपुर, पृ.26

44) बाब्रुराव गुरव, ''उपन्यासकार नागार्जुन'', 1985, शाम प्रकाशन, जयपुर, पृ.202

45) राम अहुजा, ''सामाजिक समस्याएं'', 2000, रावत पब्लिकेशन, दिल्ली, पृ.434

46) डॉ. भगवती प्रसाद शुक्ल, ''खारे जल का गांव'', 1972, स्मृति प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ.17

47) वहो, पृ.28

48) वहो, पृ.110

49) वहो, पृ.131

50) जगदीश चंद्र, ''धरती धन न अपना'', 1981, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.87

51) वही, पृ.144

52) मदन दीक्षित, ''मोरी की ईंट'', 1996, शब्दकार प्रकाशन, दिल्ली, पृ.14

53) वही, पृ.25

54) वही, पृ.58

55) डॉ. आशा मेहता, ''स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यासों में वैचारिकता'', 1988, भारतीय ग्रंथ निकेतन, दिल्ली, पृ.193

56) डॉ. भगवती प्रसाद शुक्ल, ''खारे जल का गांव'', 1972, स्मृति प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ.103

57) गणेश प्रसाद पांडेय, ''आठवें दशक की हिन्दी कहानी में ग्रामजीवन'', 1999, राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, पृ.107

58) धर्मयुग, ''8 फरवरी, 1976'', पृ.18

59) डॉ. एस. बी. महाजन, ''आधुनिक हिन्दी कहानी साहित्य में काममूलक संवेदना'', 1986, चिंता प्रकाशन, कानपुर, पृ.54

60) जगदीश चंद्र, ''धरती धन न अपना'', 1981, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.172

61) वही, पृ.172

62) मदन दीक्षित, ''मोरी की ईंट'', 1996, शब्दकार प्रकाशन, दिल्ली, पृ.28

63) वही, पृ.30

64) रामधारीसिंह दिवाकर, ''आग-पानी आकाश'', 1999, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली, पृ.35

65) रामधारी सिंह दिनकर, ''संस्कृति के चार अध्याय'', 1956, राजपाल एण्ड सन्स, नई दिल्ली, पृ.5

66) डॉ. सुभाशिनी शर्मा, ''स्वातंत्र्योत्तर आंचलिक उपन्यास'', 1976, संजीव प्रकाशन, दिल्ली, पृ.111

67) आलोचना - 'सहस्त्राबदी अंक छह', शीर्षक - ''उपन्यास जनतंत्र और हाशिये का समाज'' - वीरेन्द्र यादव, जुलाई-सितंबर 2001, पृ.89

68) जगदीश चंद्र, ''धरती धन न अपना'', 1981, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.199

60) मदन दीक्षित, ''मोरी की ईंट'', 1996, शब्दकार प्रकाशन, दिल्ली, पृ.46

70) वही, पृ.40

71) संपादक - विलास संगवे, ''भारतातील सामाजिक समस्या'', 1979, गुरूनाथ नाडगौडा / मद्यपान'', पॉपुलर प्रकाशन, मुंबई, पृ.112-116

72) जगदीश चंद्र, ''धरती धन न अपना'', 1981, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.80

73) वही, पृ.132